पूर्वांचल खेती

दीक्षान्त समारोह विशेषांक

वर्ष : 33 नवम्बर 2023 अंक : 11

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

दीक्षान्त समारोह विशेषांक

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

दीक्षान्त समारोह विशेषांक

वर्ष 32 | नवम्बर 2023 | अंक 11

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

अपर निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. के.एम. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. 9307015439

सम्पादक मण्डल

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

कुसुम (बर्रे) की वैज्ञानिक खेती 01
सत्येन्द्र कुमार, आर. के. आनन्द एवं ओ.पी.सिंह

पूर्वांचल क्षेत्र में अंजीर उत्पादन की असीम संभावनाए 02
दिनेश कुमार पाण्डेय', पी0 के0 मिश्रा'' एवं एम0 के0 सिंह'''

एरोपोनिक फार्मिंग तकनीक फसल उत्पादन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम 05
संदीप कुमार पाण्डेय, प्रमोद कुमार मिश्र एवं डी. के. सिंह

गैनोडर्मा–एक औषधीय मशरूम 08
चंद्रजीत भाई चौहान' एवं शैलेश कुमार सिंह''

कृषि बैंक मशीनरी यंत्रो का भण्डारण 09
अरविन्द कुमार सिंह, देवेश कुमार एवं संदीप सिंह कश्यप

खरपतवारों की रोकथाम के लिए स्प्रे तकनीक प्रबंधन 13
सोमेंन्द नाथ' एवं संदीप कुमार''

चना फसल के प्रमुख रोग एवं प्रबन्धन 17
मनीष कुमार मौर्य', पी. के. मिश्र'' एवं राम लखन सिंह'''

कद्दूवर्गीय सब्जियों में प्रभावशाली कीट और रोग प्रबंधन 18
प्रदीप कुमार एवं प्रवीन कुमार

मधुमेह रोगियों के लिये मिलेट आहार एक वरदान 21
रितेश सिंह गंगवार' एवं अभय दीप गौतम''

एकीकृत फसल प्रणाली में मत्स्य सह : बत्तख पालन करें 23
ए.के. सिंह' एवं आर.आर. सिंह''

नवजात बछड़ों में होने वाले संकामक रोग एवं प्रबन्धन 26
डी०डी० सिंह', बी०पी० शाही'' एवं आर० आर० सिंह'''

प्रकृति का अमूल्य औषधीय वरदान : हल्दी 29
मूदला पाण्डेय', साधना सिंह'' एवं जीनत अमान'

नवम्बर माह में किसान भाई क्या करें 33

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 34

बॉक्स सूचनाएं

अमूल्य सुझाव 22

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये 25

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस.एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
4.	फैजाबाद	डॉ. विनायक शाही	05278–254522	8755011086
5.	मऊ	डॉ. वी.के. सिंह	0547–2536240	8005362591
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. पी.के. सिंह	05252–236650	8858859244
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. शशिकान्त यादव	–	9415188020
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. आर.के. सिंह	–	9452990600
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	–
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. एल.सी. वर्मा	–	7376163318

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
2.	गोण्डा	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
3.	देवरिया	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
4.	गाजीपुर	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	8787289358	0548–223690

डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति
Dr. Bijendra Singh
Vice-Chancellor

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229 (उ.प्र.), भारत
Acharya Narendra Deva University of Agriculture & Technology
Kumarganj, Ayodhya - 224 229 (U.P.) India

संदेश

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या द्वारा अपने स्थापना के बाद से निरन्तर कृषि शिक्षा, शोध एवं प्रसार के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किये गये हैं। विश्वविद्यालय द्वारा विकसित खाद्यान्न, फल, सब्जी की प्रजातियां देश एवं विदेश के किसानों के बीच लोकप्रिय हैं तथा अपनाई जा रही हैं। विश्वविद्यालय को यह उपलब्धियां भारतीय कृषि की आवश्यकताओं तथा किसानों के हित को सर्वोपरि रखने से हासिल हुई। नवीनतम फसल प्रजातियों व तकनीकियों को किसानों तक पहुंचाने का कार्य प्रसार निदेशालय के अन्तर्गत स्थापित 25 कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा सुचारू रूप से किया जा रहा है। यह अत्यन्त सुखद है कि किसानों एवं कृषक परिवारों से सम्पर्क में विश्वविद्यालय गोष्ठियों, प्रदर्शनियों व प्रशिक्षणों के साथ–साथ सरल भाषा में कृषि साहित्य के सहयोग से उनके ज्ञान को अद्यतन करने का सफल प्रयास कर रहा है। इस क्रम में प्रसार निदेशालय द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती का प्रकाशन किया जाता रहा है।

विश्वविद्यालय के 25वें दीक्षान्त समारोह के अवसर पर यह विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। मैं पत्रिका के दीक्षान्त विशेषांक के सफल प्रकाशन एवं दीक्षान्त समारोह के सफल आयोजन हेतु विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों, शिक्षकों व विद्यार्थियों को अपनी शुभकामनाएं देता हूं।

(बिजेन्द्र सिंह)
कुलपति

Ph.: *(05270) 262161 (O)* **Telefax :** *262097 (O)* **Ph.:** *262842 (R)* **Telefax :** *262032 (R)* **Email :** *vcnduat2018@gmail.com*

डॉ. आर. आर. सिंह
अपर निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

कम लागत में ज्यादा उत्पादन, कृषि आधारित आय में वृद्धि और गुणवत्तायुक्त कृषि उत्पादन प्राप्त करने की दृष्टि से कृषि शिक्षा, अनुसंधान और प्रसार पर लगातार गंभीर प्रयास किये जा रहे हैं। हमारे किसान भाई कृषि की अत्याधुनिक तकनीकों से अपने ज्ञान को अद्यतन करते रहें इसके लिये तकनीकों के प्रचार प्रसार के लिये विशेष प्रयास किये जा रहे हैं इस क्रम में कृषि साहित्यों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

प्रसार निदेशालय द्वारा प्रकाशित की जाने वाली कृषि मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती में नवीनतम शोध व तकनीकों पर आधारित लेखों का प्रकाशन किया जाता है। कृषि एवं कृषि आधारित उद्यमों के साथ–साथ आधुनिक कृषि में उपयोग होने वाले यंत्रों आदि से सम्बन्धित लेखों का प्रकाशन पत्रिका के इस अंक में किया जा रहा है। आशा है कि पत्रिका का यह अंक हमारे किसान भाईयों और प्रसार कार्यकर्ताओं के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(आर.आर. सिंह)

कुसुम (बर्रे) की वैज्ञानिक खेती

सत्येन्द्र कुमार, आर. के. आनन्द एवं ओ.पी.सिंह

प्राचीन काल से ही अनाज, दलहन एवं तिलहन की बहुत सी फसलें बोई जाती थी,जिनका हमारे पोषण एवं स्वास्थ्य में महत्वूर्ण योगदान था परन्तु पिछले 40–45 वर्षो के इनमें से कुछ फसलें की खेती का प्रचलन बहुत कम हो गया है। जिस कारण ये फसले भूली बिसरी फसलों की श्रेणी में आ गयी हैं इन्हीं में हक कुसुम (बर्रे) भी एक है जिसको तीन–चार दशकों पहले प्रमुखता से उगाया जाता था परन्तु वर्तमान में फसल आच्छादन लगभग नगण्य है। कुसुम (बर्रे) रबी की एक महत्वपूर्ण तिलहन फसल है। जिसमें काफी अधिक औषधीय गुण पाये जाते है। इसके तेल का उपयोग उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोगियों के लिए लाभदायक है। अन्य तिलहनी फसलों की अपेक्षा पूर्वी मैदानी क्षेत्र के किसान कुसुम (बर्रे) की खेती कम करते हैं। कुसुम (बर्रे) की कृषि तकनीक निम्नवत है–

खेत की तैयारी

खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद में पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो पलेवा करके खेत तैयार करना चाहिए। अच्छे उत्पादन के लिए जल निकास युक्त भूमि व का चयन करें।

बुवाई का समय

बुवाई का उचित समय मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर है। इसकी बुवाई 45 सेमी. कतार की दूरी पर कूंडों में करें बुवाई के 15–20 दिन बाद अतिरिक्त पौधे निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 20 से 25 सेमी. कर दी जाये। बीज को 3 से 4 सेमी. की गहराई पर बोयें।

बीज दर

18–20 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

उन्नतशील प्रजातियाँ

प्रजाति	विशेषता
एनएआरआई–6	अवधि 127–137 दिन
जेएसएफ–1	सफेद फूल, काटेदार
जेएसआई–7	सफेद फूल, काटे रहित
जेएसआई–73	पीले फूल, काटे रहित
के–65	तेल की मात्रा 30–35 प्रतिशत
मालवीय कुसुम 305	तेल की मात्रा 36 प्रतिशत, अवधि 160 दिन

बीजोपचार

केप्टान या थीरम 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा

उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर करें अन्यथा नत्रजन 40 किग्रा. एवं 20 किग्रा. फॉस्फोरस और 20 किग्रा. सल्फर का प्रयोग अधिक लाभकारी होता है।

निराई–गुडाई

बुवाई के 20–25 दिन बाद निराई–गुडाई करें। अनावश्यक पौधों को निकालकर हुए पौधों की दूरी 20–25 सेमी. कर दें।

सिंचाई

प्रायः इसकी खेती असिंचित क्षेत्रों में की जाती है यदि सिंचाई के साधन हैं तो ही एक सिंचाई फूल आते समय करें।

फसल सुरक्षा

खड़ी फसल में कभी–कभी गेरूई रोग तथा माहूँ कीट का प्रकोप हो जाता है। जिससे फसल को भारी क्षति होती है, अतः आवश्यकतानुसार इनकी रोकथाम कर निन्नलिखित विधि से करना चाहिए–

गेरूई रोग की पहचान

पत्तियों पर पीले अथवा भूरे रंग के फफोले पड़ जाते है।

उपचार

इस रोग की रोकथाम के लिए मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू पी. 2किग्रा को 800–1000 लीटर पानी में प्रति

(शेष पृष्ठ 04 पर)

पूर्वांचल क्षेत्र में अंजीर उत्पादन की असीम संभावनाए

दिनेश कुमार पाण्डेय*, पी0 के0 मिश्रा** एवं एम0 के0 सिंह***

अंजीर मोरसी कुल का पौधा है जिसका वानस्पतिक नाम फाइकस कैरिका है इसका पौधा छोटे आकार का एवं पर्णपाति प्रकृति का होता है। इसके ताजा फल तथा सूखे फल (मिवा) दोनों रूप में उपयोग में लाये जाते हैं। पूर्वांचल में अंजीर की खेती आसानी से की जा सकती है। पूर्वांचल में जंगली अंजीर व गूलर प्रायः देखने को मिल जाता है। जिन स्थानों पर गूलर के पौधे पाए जाते हैं उन स्थानों पर अंजीर की खेती आसानी से की जा सकती है।

इसका उत्पत्ति स्थल पूर्व भूमध्यसागरीय, तुर्की, सीरिया, सऊदी अरब इत्यादि माना जाता है। यही से अंजीर पूरे मध्य सागरीय क्षेत्र तथा दुनिया के अन्य गर्म एवं शुष्क इलाकों में फैला। कोलंबस द्वारा अमेरिका की खोज के दौरान अंजीर का विस्तार पश्चिमी गोलार्ध के लगभग सभी उष्णकटिबंधीय देश में हुआ। परंतु विश्व स्तर पर ग्रीस, तुर्की, इटली, अल्जीरिया, स्पेन, ब्राजील व सीरिया आदि देशों को अंजीर की व्यावसायिक बागवानी व प्रसंस्करण के लिए जाना जाता है। भारतवर्ष में लगभग एक 1000 हैक्टेयर क्षेत्रफल में अंजीर का उत्पादन हो रहा है, जो कि दक्षिण व पश्चिमी राज्यों तक ही सीमित है।

उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में अंजीर को उगाया जा रहा है जिसमें आजमगढ़ व गोंडा एंव कुछ अन्य जनपदों में बागो एवं घरों के आसपास पौधे देखने को मिलते हैं। अभी इसकी व्यावसायिक बागवानी उत्तर प्रदेश में नहीं की जा रही है।

पोषक तत्व एवं औषधोय गुण

अंजीर के ताजा एवं सूखे फल पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। प्रत्येक 100 ग्राम सूखे अंजीर के खाए जाने वाले भाग में 4 ग्राम प्रोटीन, 69 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 1 ग्राम वसा, 200 मिलीग्राम कैल्शियम, 4 मिलीग्राम लोहा 100 आईयू विटामिन ए तथा 10 मिलीग्राम थायमिन प्राप्त होता है। सूखे अंजीर को पेट साफ करने के लिए औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। अंजीर त्वचा रोगों में भी लाभकारी है। कुछ स्थानों पर दूध को जमाने के लिए अंजीर से निकले द्रव पदार्थ (लेटैक्स) का उपयोग किया जाता है। अंजीर के फलों का प्रसंस्करण करके विभिन्न उत्पाद बनाए जाते हैं।

भूमि एवं जलवायु

अंजीर के पौधे विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाये जा सकते हैं। किंतु लगभग 1 मीटर गहराई वाले माध्यम से भारी दोमट, मध्यम काली मिट्टी जिसमें जल धारण क्षमता अच्छी हो तथा साथ–साथ जल निकास की उचित व्यवस्था हो, इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। इसके पौधे लवणीय तत्वों में क्लोराइड तथा सल्फेट के प्रति सहनशील किंतु सोडियम कार्बोनेट के प्रति संवेदनशील होते हैं। अतः कैल्केरियस मृदा अंजीर के लिए उपयुक्त नहीं होती है। बलुई मिट्टी में पर्याप्त बाग प्रबंधन द्वारा अंजीर की खेती संभव है।

अंजीर शुष्क व उपोष्ण जलवायु का फल है। तथा इसके लिए शुष्क एवं अर्ध शुष्क वातावरण, गर्मी में उच्च तापमान पर्याप्त धूप व मध्यम जाड़ा उपयुक्त होता है। यह वृक्ष 45 डिग्री सेंटीग्रेड तक का तापमान सहन कर सकता है कितु 39 डिग्री सेंटीग्रेड के ऊपर तापमान जाने से फल की गुणवत्ता खराब होने लगती है। अच्छी गुणवत्ता युक्त अंजीर के लिए फल विकास एवं परिपक्वता के समय शुष्क जलवायु एवं मध्यम तापमान की आवश्यकता होती है। अधिक आर्द्रता के साथ–साथ कम तापक्रम से फलों के फटने की समस्या प्रारंभ हो जाती है। जाड़े के दौरान जब पौधे पत्ती विहीन हो जाते हैं तब वे 0 से 10 डिग्री सेंटीग्रेड तक तापमान सहन कर सकते हैं किंतु नए आरोपित पौधों के लिए सर्दी से बचाव अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

उन्नत किस्म

भारतवर्ष में पुना फिग एक प्रमुख किस्म है इसके अलावा कोनार्डिया, इक्सेल आदि किस्म को कहीं–कहीं पर उगाया जाता है।

*कार्यकम सहायक, **विषय वस्तु विशेषज्ञ, वानकी, ***विषय वस्तु विशेषज्ञ, उद्यान, मनकापुर, गोण्डा

प्रसारण तकनीक

अंजीर का व्यवसायिक प्रसारण कठोर कलम से किया जाता है। प्रवर्धन का उचित समय नवंबर से फरवरी माह होता है। जंगली अंजीर के पौधों पर शील्ड अथवा पैबंदी चश्मा विधि द्वारा प्रसारण किया जा सकता है।

बाग स्थापना

अंजीर के रोपण हेतु बाग का रेखांकन वर्गाकार विधि से किया जाता है। पौधों से पौधों के बीच की दूरी किस्म के अनुसार रखी जाती है। पुना अंजीर के लिए 5 गुणा 5 मीटर एवं इक्सेल तथा कोनार्डिया अंजीर के लिए 2.5 गुणा 2.5 मीटर पर रेखांकन करते हैं। रेखांकन के पश्चात निश्चित स्थान पर 60 गुणा 60 गुणा 60 सेंटीमीटर आकर के गड्ढे की खुदाई करके 45 दिन तक गढ्डा खुला रखते हैं इसके पश्चात गड्ढे के ऊपरी भाग की मिट्टी के साथ गोबर की सड़ी खाद या कंपोस्ट (15 से 20 किलोग्राम) एवं 500 से 1000 ग्राम नीम की खाली के मिश्रण से गड्ढे की भराई करते हैं। यदि आवश्यक समझे तो उर्वरकों का प्रयोग गड्ढा भरते समय पर कर सकते हैं। पौधा लगाने का सबसे उपयुक्त समय बरसात या बसंत ऋतु होती है। पानी की होने पर अंजीर के पौधों को कभी भी लगाया जा सकता है।

संघाई एवं काट छांट

पौधा लगाने के 1 वर्ष के भीतर अंजीर के पौधों को उपयुक्त ढांचा देना जरूरी होता है तने पर 50 से 60 सेंटीमीटर की ऊंचाई पर चारों दिशाओं में तीन से चार शाखों को विकसित करके मजबूत ढांचा प्रदान किया जाता है। इन शाखों पर मुख्य रूप से फलत होती है। अंजीर में मुख्य शाखों के साथ–साथ पतली शाखों पर भी फूल एवं फल आतते हैं। अतः नियमित फलत प्राप्त करने के लिए पौधों की नियमित कटाई छँटाई की आवश्यकता पड़ती है। पौधों की काट छांट जाड़े के दिनों में की जाती है। किसी डाली पर पिछले वर्ष की चार पांच गाठें छोड़कर कटाई करने से नए कल्ले निकलते हैं। जिनमें पर्याप्त परिपक्वता आने के बाद फूल और फल लगते हैं।

देखभाल व प्रबंधन

अंजीर के बगीचों में बाग प्रबंधन की विशेष जरूरत होती है, क्योंकि नियमित एवं अच्छे फलन के लिए पौधों का पोषण एवं सिंचाई आवश्यक होतीं है।

जल प्रबंधन

अंजीर के पौधों को गर्मी के दिनों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। इन दिनों में 10 से 12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करने पर पौधों की वृद्धि व फलन में सुधार होता है, पौधों के थालों पर पॉलिथीन या घास की पलवार बीछाने से नमी समान रूप से बनी रहती है और फल विकास अच्छा होता है।

पोषण प्रबंधन

अंजीर के पौधों को 50 ग्राम नाइट्रोजेन, 25 ग्राम फास्फोरस व 25 ग्राम पोटाश के साथ–साथ गोबर की सड़ी खाद 10 से 15 किलोग्राम एवं अन्य खाली एवं कार्बनिक पदार्थ 500 ग्राम प्रति पौध प्रति वर्ष की दर से 5 वर्षों तक बढ़ते हुए क्रम मैं देना चाहिए। इसके बाद पौधों को 20 से 25 किलोग्राम गोबर की खाद, 800 से 1000 ग्राम खाली, 200 से 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फास्फोरस व 125 ग्राम पोटाश प्रतिवर्ष काट छांट के बाद देना चाहिए। एक रिपोर्ट के अनुसार अंजीर के बगीचों में 300 किलोग्राम यूरिया तथा 325 किलोग्राम पोटेशियम क्लोराइड प्रति हेक्टेयर के दर से प्रयोग करने से 25 से 30 प्रतिशत ऊपज एवं 35 से 40 प्रतिशत फलों के वजन में वृद्धि हुई।

कीट प्रबंधन

अंजीर में माइट, मिज, माह, तना छेदक स्केल पत्ती मोड़क तथा शूट गाल मेकर आदि कीटों का प्रकोप होता है। मिज के नियंत्रण हेतु 0.1 प्रतिशत कार्बेरिल तथा माइट के नियंत्रण के लिए 0.5 प्रतिशत डायकोफाल का दो तीन छिड़काव किया जाता है। अन्य कींटों के प्रबंधन के लिए नीम आधारित कीटनाशक या क्लोरोपायरीफोस, कार्बरिल आदि के घोल का छिड़काव किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन

अंजीर में रतुआ या रस्ट एक प्रमुख बीमारी है जो

सेरोटैलियम फिसी नामक कवक से होती है। इसके प्रकोप से पत्तियां पीली होकर गिर जाती हैं। सभी किस्मों पर इसका प्रकोप होता है। अतः इसके नियंत्रण पर कारगर उपाय करना लाभप्रद होता है। रस्ट के नियंत्रण के लिए क्लोरोथैलोनिल या कवच नामक दवा के 0.2 प्रतिशत घोल का 2 से 3 छिड़काव नई पत्तियों पर करना लाभकारी पाया गया है।

दैहिक व्याधि प्रबंध

नए रोपित पौधों में सन बर्न की समस्या पाई जाती है इसके लिए मुख्य तने पर चूने की पुताई कर देना चाहिए। फलों का फटना एक अन्य समस्या है जो फल विकास के समय तापक्रम के 39 डिग्री सेंटीग्रेड से अधिक हो जाने व पोषक तत्वों की कमी से आती है। पोषक तत्वों में मुख्य रूप से बोरेक्स 0.5 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करने से फलों का फटना कम हो जाता है।

पुष्पन एवं फलन

दर रण अंजीर के पौधों में मोटी तथा पतली डालियों पर फूल एवं फल आते हैं इनमें से कुछ किस्म में परागण की आवश्यकता होती है जबकि कुछ किस्म में बिना परागण एवं रू निषेचन के ही फल लगते हैं। भारतवर्ष में उगाई जाने वाले अंजीर की किस्मों में फलत अभिषेजन पार्थेनोकार्पी द्वारा होता है अतः परागण की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

परिपक्वता एवं फल तोड़ाई

फलों की तुड़ाई पूर्ण परिपक्वता के बाद करनी चाहिए फलों की तोड़ाई करते समय यदि तने से सफेद स्राव गिरता है तो इसका तात्पर्य है कि फल अभी अपरिपक्व है परिपक्व फल मुलायम होकर अपने भार के कारण लटकने लगता है फलों की तुड़ाई फरवरी से जून तक होती है।

उपज

प्रति वृक्ष 460 से 360 किलोग्राम तथा प्रति हेक्टेयर 420 कुंतल औसत उपज प्राप्त। हो जाती है।

तोड़ाई उपरांत फल प्रबंधन

अंजीर के ताजे फल बहुत जल्दी खराब होने लगते हैं इसलिए दूर के बाजार में भेजने के लिए पूर्ण परिपक्वता से थोड़ा पहले तोड़ना चाहिए। यदि ताजे फलों को विपणन के लिए दो–तीन दिन रखना हो तो फलों को प्लास्टिक की पतली झिल्ली में लपेट कर रखना चाहिए। पूर्ण रूप से पके हुए फल को जीरो डिग्री तापमान तथा 90 प्रतिशत आर्द्रता पर एक सप्ताह तक रखा जा सकता है।

परिरंक्षण एवं मूल्य संवर्धन

अंजीर के फलों को मुख्य रूप से सुखाकर संरक्षित किया जाता है। फलों को सुखाने के पूर्व सल्फर का धुआं दिया जाता है। तत्पश्चात इसके बाद इलेक्ट्रिक ड्रायर में 70 से 72 डिग्री सेंटीग्रेड पर सुखाया. जाता है। एक अन्य विधि में नमक के उबलते घोल में 30 सेकंड तक डुबोकर कुछ समय के लिए धूप में सुखा कर फिर छायें में 7 से 8 दिन तक सुखाकर संरक्षित किया जा सकता है।

(पृष्ठ 01 का शेष)

हेक्टेयर की दर से 10–14 दिन के अन्तर पर 3–4 बार छिड़काव करें।

माहूँ कीट की पहचान

यह कीट काले रंग के होते हैं, जो समूह में पुष्प/पत्तियों/ कोमल शाखाओं पर चिपके रहते हैं. तथा रस चूसकर क्षति /पहुँचाते है।

उपचार

मैलाथियान 50 ई.सी. अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत एस.एल या ऑक्सीडेमेटान–मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. का। लीटर प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। अगर यदि आवश्यकता पड़ने पर 15 से 20 दिन के अन्तर पर पुनः छिड़काव करें।

कटाई–मड़ाई

फसल पकने पर पत्तियों पीली पड़ जाती हैं तभी इसकी कटाई करनी चाहिए। सूखने के बाद मड़ाई करके दाना अलग कर देना चाहिए।

उपज

15 से 18 कु0/हे0

एरोपोनिक फार्मिंग तकनीक फसल उत्पादन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम

संदीप कुमार पाण्डेय, प्रमोद कुमार मिश्र एवं डी. के. सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी 65 से 70 प्रतिशत आबादी आज भी कृषि आधारित काम धंधों पर टिकी हुई है। दिन–प्रतिदिन कृषि वैज्ञानिकों के द्वारा की जा रही नई– नई तकनीकों के कारण किसानों की परेशानियाँ और उनके काम को आसान भी बनाए जाने के निरंतर जमीनी स्तर पर प्रयास किये जा रहे हैं। इन्हीं प्रयासों के चलते हाल ही में वैज्ञानिकों ने एरोपोनिक तकनीक का इस्तेमाल करके हवा में आलू उगाने का नया तरीका ईजाद कर दिखाया है। इस तकनीक का प्रयोग करते हुए अब हर छोटा–बड़ा किसान बिना किसी बड़े खेत और जमीन का इस्तेमाल किये आलू की फसल का अच्छा उत्पादन कर सकेगा। इस तकनीक के जरिए आलू उगाने के लिए अब जमीन और मिट्टी की जरूरत नहीं पड़ेगी। आलू प्रौद्योगिकी केंद्र के मुताबिक, ऐसा करने से न केवल दिनों दिन कम होती जा रही खेती योग्य जमीन की कमी को पूरा किया जा सकेगा, बल्कि पैदावार में भी 10 गुना तक वृद्धि की जा सकेगी, जिसमें कम लागत में आलू की ज्यादा फसल की पैदावार करके किसान अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

हमारे देश भारत के कई रिसर्च सेंटर इस तकनीक पर कार्य कर रहे हैं भारत सरकार भी इस तकनीक को आलू की खेती करने की मंजूरी प्रदान कर दी है इसके साथ कुछ राज्य जैसे मध्य प्रदेश, पंजाब हरियाणा, हिमाचल प्रदेश आदि इस तकनीक का उपयोग आलू के उत्पादन के लिए कर रहे हैं। इस तकनीक में लटकती हुई जड़ों में पोषक तत्वों को स्प्रे कराया जाता हैं और पौधे के ऊपरी भाग को खुली हवा और रोशनी में रखा जाता है. इस तरह से पौधे को पूरा पोषण मिल जाता है। एयरोपोनिक्स तकनीकी से आलू की पहली फसल उगने में लगभग 75 से 80 दिन लगते हैं इसके बाद यह खाने के लायक हो जाता है। इस तकनीक का सबसे बड़ा फायदा ये है कि इसमें ज्यादा जगह की जरूरत नहीं पड़ती है। इस तकनीक की मदद से आलू के स्वस्थ बीज का उत्पादन भी किया जाता है यह एक ऐसी तकनीक जिसमें ना जमीन की जरूरत होगी और ना ही जुताई और फसल तैयार करने के लिए अधिक लागत की जरूरत पड़ती है।

एरोपॉनिक सिस्टम को स्थापित करने में अधिक पैसे की जरुरत पड़ती है लेकिन एक बार स्थापित हो जाने के बाद अच्छी तरीके से देखरेख में इससे अच्छा मुनाफा प्राप्त किया जा सकता हैं। इस तकनीक की वैश्विक पहुंच भी अच्छी है खेती का यह तरीका पूरी दुनिया में काफी लोकप्रियता हासिल कर रहा है। एयरोपोनिक बिजनेस स्टार्ट–अप के सर्वेक्षण में, पूरे उत्तर और दक्षिण अमेरिका, यूरोप, मध्य पूर्व और भारत में भी कई फर्मों की खोज की गई जो विश्व स्तरीय अपनी लोकप्रियता हासिल कर चुके हैं।

जैविक भोजन की बढ़ती लोकप्रियता और कृषि में रोग–मुक्त वातावरण की आवश्यकता के कारण, पूर्वानुमान अवधि के दौरान एरोपोनिक्स उद्योग की मांग तेजी से बढ़ने की उम्मीद है। खेती में प्रौद्योगिकी के उपयोग से पौधों के वृद्धि एवं विकास की निगरानी करना संभव हो जाता है, जो बाजार में इस तकनीक के विस्तार को और बढ़ावा देता है। कुछ भारतीय स्टार्टअप जैसे सिटीग्रीन्स जो भारत में सबसे बड़ा और सबसे समृद्ध हाइड्रोपोनिकध्एरोपोनिक स्टार्टअप है। जिसे विज्ञान और प्रौद्योगिकी एवं कृषि मंत्रालयों से वित्तीय अनुदान भी प्राप्त है।

एरोपोनिक्स सिस्टम की चुनौतियाँ

- इस तकनीक को आरंभ करने के लिए सही ज्ञान और व्यापक प्रशिक्षण प्राप्त ना होना।
- अधिक लागत की आवश्यकता होती है।
- मूर्त पहलुओं को कायम रखने में कठिनाई होगी।
- उचित रखरखाव की आवश्यकता।
- एरोपोनिक्स खेती की बंद या इनडोर तकनीक में, पौधे के खुले हिस्से के लिए प्रकाश की सही मात्रा

कृषि महाविद्यालय कोटवा, आजमगढ़,
आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

और हवा की आपूर्ति बनाए रखना।

- कृत्रिम प्रकाश के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी ना होना।

भारत में एरोपोनिक खेती का महत्व

जनसंख्या के मामले में भारत विश्व में प्रथम स्थान रखता है, बढती जनसंख्या के कारण कृषि की जोत का आकार छोटा हो रहा है जिससे कृषि क्षेत्रों पर बढ़ती जनसंख्या को खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराने का दबाव है। भारत में एरोपोनिक खेती प्रति इकाई क्षेत्र में उपज बढ़ाने और पानी और पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को कम करने में मदद करती है। इसके अतिरिक्त एरोपोनिक खेती मौसम की स्थिति की परवाह किए बिना साल भर ताजा उपज प्रदान कर सकती है।

भारत में एरोपोनिक खेती की लागत

भारत में एरोपोनिक सिस्टम से खेती करने की लागत कई कारकों के आधार पर भिन्न हो सकती है जैसे कि खेती का आकार, उपयोग किए जाने वाले उपकरण का प्रकार और मजदूरी की लागत पर निर्भर करती है। आमतौर पर एरोपोनिक सिस्टम स्थापित करने की प्रारंभिक लागत विशेष उपकरणों की आवश्यकता के कारण अधिक होती है, जैसे कि फोगिंग प्रणाली, पोषक तत्व घोल और कृत्रिम प्रकाश इत्यादि। इसके अतिरिक्त पारंपरिक कृषि पद्धति की तुलना में एरोपोनिक कृषि प्रणाली से खेती करने में मजदूरी की लागत अधिक हो सकती है, क्योंकि इसके लिए उचित ज्ञान, वैज्ञानिक प्रशिक्षण और प्रशिक्षित व्यक्ति की आवश्यकता होती है। इस तकनीक में कृत्रिम ग्रो लाइट और अन्य उपकरणों के सञ्चालन में बिजली की लागत भी अधिक आती है। हालाँकि, इस बात का ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि, एरोपोनिक खेती के दीर्घकालिक लाभ भी हैं जैसेकि जल दक्षता, उच्च पैदावार और साल भर फसल उत्पादन इत्यादि। इसके अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा भी एरोपोनिक खेती की प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए किसानों को सब्सिडी और वित्तीय सहायता सहित कई अन्य तरह की पहल शुरू की गयी हैं, जो एरोपोनिक खेती की स्थापना की लागत को कम करने और इसके प्रति किसानों की रूचि बढ़ाने में मददगार साबित हो सकती हैं।

एरोपोनिक सिस्टम प्रणाली से खेती के फायदे

एरोपोनिक खेती के निम्नलिखित फायदे हैः

1.पानी की बचत

पारंपरिक खेती पद्धति की तुलना में एरोपोनिक खेती में 90: कम पानी का उपयोग होता है। इस तकनीक में पौधे एक बंद प्रणाली में उगाए जाते हैं, तथा इस प्रणाली में उपयोग किए गए पानी को पुनर्चक्रित भी किया जाता है जिससे पानी की खपत भी कम हो जाती है।

2.पोषक तत्व दक्षता

एरोपोनिक खेती में पोषक तत्वों के घोल को पौधों की जड़ पर स्प्रे किया जाता है। जिससे यह सुनिश्चित होता है कि पौधों को सही मात्रा में आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त हो रहे हैं। इस तरह समग्र पोषक तत्वों की आवश्यकता भी घोल से ही पूरी हो जाती है तथा पोषक तत्वों की बर्बादी भी कम होती है।

3.कम जगह की आवश्यकता

एरोपोनिक खेती प्रणाली ऊर्ध्वाधर या खड़ी खेती के रूप में भी की जा सकती है, जहां उपलब्ध स्थान का कुशलतापूर्वक उपयोग करते हुए पौधों को एक दूसरे के ऊपर रखा जाता है। इस पद्धति से खेती करने से प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

4.वर्ष भर उत्पादन

इस प्रकार की खेती घर के अंदर की जा सकती है नियंत्रित वातावरण में खेती करने से यह पूरे साल भर फसल उत्पादन की अनुमति देता है। इससे बेमौसमी फसलों कर साथ ताजे फल एवं सब्जियों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करती है।

5.कीटो एवं बीमारियों का प्रकोप कम होना

इस प्रकार की खेती से कीट और बीमारियों का खतरा कम हो जाता है क्योंकि पौधे नियंत्रित वातावरण में उगाए जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप पौधे रोग से मुक्त एवं स्वस्थ होते हैं जिससे विभिन्न प्रकार के खतरनाक कीटों एवं बीमारियों से नुकसान की संभावना कम होती है।

6.स्थायी कृषि पद्धति

यह तकनीक एक स्थायी कृषि पद्धति है जो पानी के रासायनिक उपयोग और कार्बन फुटप्रिंट को कम करती है। यह इसे पारंपरिक खेती के तरीकों का पर्यावरण अनुकूल विकल्प बनाता है।

7.तेजी से विकास

इस खेती से पौधों का वृद्धि एवं विकास तेजी से होता है क्योंकि उन्हें आवश्यक पोषक तत्व और पानी सीधे उनकी जड़ों तक समय समय पर मिलता रहता है जिससे फसल तैयार होने में कम समय एवं पैदावार अधिक होती मिलती है।

एरोपोनिक खेती में मिट्टी के बिना पौधे उगाने के लिए विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है। इस प्रणाली में उपयोग किए जाने वाले कुछ प्रमुख उपकरण निम्नलिखित हैं:

ग्रो चौंबर्स

पौधों को जड़ों तक पोषक तत्व पहुंचाने के लिए धुंध प्रणाली के साथ बंद चौंबरों की आवश्यकता पड़ती है जिनमे पौधों को उगाया जाता है। कक्षों का आकार और संख्या खेती के पैमाने पर निर्भर करती है।

मिस्टिंग सिस्टम

पौधों की जड़ों तक पोषक तत्व घोल पहुंचाने के लिए मिस्टिंग सिस्टम का उपयोग किया जाता है। जड़ को ढकने वाली महीन धुंध उत्पन्न करने के लिए सिस्टम उच्च दबाव वाले पंपों का उपयोग करके पौधों की जड़ों में सीधे किया जाता है।

पोषक तत्व घोल

पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने के लिए मिट्टी के स्थान पर पोषक तत्व घोल का उपयोग किया जाता है। यह घोल पानी और आवश्यक पोषक तत्वों जैसे कि मैक्रो एवं माइक्रो तत्वों का मिश्रण, जिनकी पौधों को वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यकता होती है।

पी. एच. और ई. सी. मीटर

पी. एच. और ई. सी. मीटर का उपयोग पोषक तत्त्वों के घोल की अम्लता एवं विद्युत चालकता के स्तर की माप या निगरानी के लिए किया जाता है। ये मीटर यह सुनिश्चित करने में मदद करते हैं कि पौधों को जो आवश्यक पोषक तत्व मिल रहे हैं उसका पी. एच. स्तर फसल के लिए अनुकूल है या नहीं।

ग्रो लाइट्स

प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक प्रकाश प्रदान करने के लिए इनडोर एरोपोनिक खेती में कृत्रिम प्रकाश प्रदान करने के लिए ग्रो लाइट्स का उपयोग किया जाता है। एल ई डी ग्रो लाइटें अपनी ऊर्जा दक्षता और लंबे जीवनकाल के कारण इस तकनीक से खेती के लिए सबसे अधिक लोकप्रिय विकल्प हैं।

पंखे और वेंटिलेशन

पंखे और वेंटिलेशन सिस्टम का उपयोग ग्रो चौंबर्स में हवा प्रसारित करने और इष्टतम तापमान एवं आर्द्रता स्तर बनाए रखने के लिए उपयोग किया जाता है।

पंप और फिल्टर

पंप और फिल्टर का उपयोग पोषक तत्त्वों के घोल को पुनरू प्रसारित करने एवं समय के साथ जमा होने वाली किसी भी अशुद्धता को छानने के लिए किया जाता है।

नियंत्रण प्रणाली

तापमान, आर्द्रता और पोषक तत्वों के स्तर की निगरानी सहित एरोपोनिक खेती कार्यों को स्वचालित करने के लिए एक टाइमर, एलार्म और नियंत्रण प्रणाली का उपयोग किया जाता है। ये सिस्टम किसी भी समस्या या खराबी के मामले में वास्तविक समय से अलर्ट भी प्रदान करते हैं।

निष्कर्ष के तौर पर भारत में एरोपोनिक सिस्टम फसल उगाने का एक अपेक्षाकृत नया और उन्नत तरीका है जो पारंपरिक खेती के तरीकों की तुलना में कई लाभ प्रदान कर सकता है। भारत में एरोपोनिक खेती पानी और पोषक तत्व दक्षता के साथ साल भर उत्पादन, तेजी से विकास, कम कीटनाशकों के उपयोग और स्थान दक्षता की अनुमति देती है सही उपकरण और विशेषज्ञता के साथ भारत में एरोपोनिक खेती कृषि में क्रांति लाने की क्षमता है और खाद्य पदार्थों को उगाने का अधिक टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल तरीका अपनाया जा सकता है।

गैनोडर्मा-एक औषधीय मशरूम

चंद्रजीत भाई चौहान* एवं शैलेश कुमार सिंह**

मशरूम की खेती के बारे में तो आपने सुना होगा, लेकिन गैनोडर्मा मशरूम की खेती के बारे में बहुत ही कम लोग जानते होंगे। गैनोडर्मा मशरूम को रिशी मशरूम के नाम से भी जाना जाता है। वर्षा ऋतु के मौसम में यह सख्त, सूखे व जीवित वृक्षों की जड़ के पास उग आती है। यह मशरूम देखने में गहरा लाल, स्लेटी, भूरे रंग का और चमकदार होता है। प्रकृति में गैनोडर्मा मशरूम की कई किस्में मौजूद है। गैनोडर्मा का ताजा मशरूम गूदेदार और सूखने पर सख्त व कड़क हो जाता है। गैनोडर्मा मशरूम में कई औषधीय गुण होते है, जिस वजह से यह कमजोरी को दूर करने में सहायक है। इसके अलावा यह एलर्जी, उच्च रक्त चाप जैसी समस्या से भी निजात दिलाता है। औषधीय गुण से भरपूर होने के कारण बाजार में गैनोडर्मा मशरूम की काफी मांग बढ़ती जा रही है।

भारत के लगभग सभी भूभागों में गैनोडर्मा मशरूम मिल जाता है। उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश के किसान गैनोडर्मा मशरूम की खेती कर अधिक मुनाफा भी कमा रहे है। गैनोडर्मा मशरूम को प्रयोगशाला में सफलता पूर्वक उगाया जा चुका है। गैनोडर्मा मशरूम में गैनोडेरिक अम्ल, जरमेनियम और गैनोईरान पाए जाते है। भारत के अलावा चीन में भी इस मशरूम की खेती की जाती है।

गैनोडर्मा मशरूम की पहचान

- यह मशरूम अधिक घने जंगलो और नमी में पाया जाता है।
- गनोडर्मा मशरुम काफी चमकदार होता है।
- यह मशरूम गहरा लाल और भूरे रंग का होता है।
- गैनोडर्मा मशरूम ताजी अवस्था में गूदेदार होता है।
- सूखा गैनोडर्मा मशरूम काफी सख्त हो जाता है।
- गैनोडर्मा मशरूम की खेती के लिए उचित जलवायु
- गैनोडर्मा मशरूम ठंडे मौसम में उगाई जाती है। इसके उत्पादन कक्ष का तापमान 22 से 25 डिग्री तक होना चाहिए, तथा बीज अंकुरण के लिए 30 से 35 डिग्री तापमान की जरूरत होती है, इससे पैदावार काफी अच्छी मिलती है।

गैनोडर्मा मशरूम की खेती के लिए सामग्री तैयार करना

गैनोडर्मा मशरूम की खेती में सामग्री को तैयार करने के लिए सबसे पहले आपको 1:3 के अनुपात में लकड़ी का बुरादा और गेहूँ का भूसा लेना होता है। इन दोनों सामग्रियों को तकरीबन 20 घंटे तक अलग–अलग गलाने के बाद बाहर निकालना होता है, इससे अतिरिक्त पानी निकल जाएगा। इसके बाद दोनों ही चीजों को बराबर मात्रा में मिला दे। सामग्री में पानी की मात्रा तकरीबन 65ः रखी जाती है। इसके बाद पॉलीथीन की दोहरी थैली में ऊपर की तरफ प्लास्टिक की वलय और रूई की डाट को लगा दिया जाता है। इसके ऊपर रबर बैंड और कागज लगाकर ऑटोक्लेव में 15 पोंड दाब के साथ दो घंटे तक निर्जीविकरण किया जाता है। अब सामग्री को ठंडा होने के लिए रख दिया जाता है।

गैनोडर्मा मशरूम की बिजाई का तरीका

मिश्रण तैयार करने के बाद बिजाई 3 प्रतिशत गीले मिश्रण के हिसाब से की जाती है। फिर इसको 30 से 35 डिग्री तापमान पर बीज अंकुरण के लिए रख दिया जाता है, और तकरीबन 5 सप्ताह बाद बीज की बढ़वार पूर्ण हो जाती है। प्लास्टिक की थैलियों को चाकू की सहायता से चारो तरफ से कट कर देते है, तथा नमी बनाए रखने के लिए निरंतर पानी का छिड़काव करते रहे।

गैनोडर्मा मशरुम की तुड़ाई

गैनोडर्मा के मशरूम की बढ़वार धीरे–धीरे होती है, तथा तैयार किए गए पैकेटो से कुछ दिन पश्चात् मशरूम का अंकुरण शुरू हो जाता है, और तकरीबन 3 से 5 सप्ताह में मशरूम तैयार हो जाती है। जिसे संग्रहण करने के लिए घुमाकर मशरूम को तोड़ लेते है। सूखे मशरूम से तैयार पाउडर को अधिक समय तक संग्रहित किया जा सकता है। कुछ विदेशी कंपनिया इस मशरूम से तैयार पाउडर और कैप्सूल

(शेष पृष्ठ 12 पर)

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (कीट विज्ञान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यछ, कृषि विज्ञान केंद्र, हैदरगढ़ (बाराबंकी) 225124, उत्तर प्रदेश, भारत

कृषि बैंक मशीनरी यंत्रो का भण्डारण

अरविन्द कुमार सिंह, देवेश कुमार एवं संदीप सिंह कश्यप

आज भारतीय कृषि मानव शक्ति पर निर्भरता से एक श्रमिक बदलाव के दौर से गुजर रही है और मानव श्रम की बढ़ती कमी और पशु शक्ति रख–रखाव के लिए बढ़ती लागत के कारण यांत्रिक शक्ति की ओर बढ़ रही है। इसके अलावा यांत्रिक शक्ति का असर खेती पर पड़ता है। आज फसलोत्पादन में कठिन परिश्रम को कम करने और कृषि कार्यों को समय पर करने के लिए कृषि में मशीनीकरण की आवश्यकता है। खेती में उन्नत कृषि यंत्रों द्वारा आज किसान किसी भी कृषि कार्यो में होने वाले खर्च, श्रम, ऊर्जा, ईंधन, एवं समय में बचत करके अधिक लाभ कमा सकते हैं तथा अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान कृषि में उन्नत यंत्र एवं मशीनें जैसेः ट्रैक्टर एवं हैरो, कल्टीवेटर, रोटावेटर, पैड़ी पडलर, लेजर लैंड लेवलर, नो टिल ड्रिल मशीन, रेज्ड बेड प्लान्टर, आलू बुवाई यंत्र, गाजर बुवाई यंत्र, लहसुन बुवाई यंत्र, गन्ना बुवाई यंत्र, स्व–चालित धान रोपाई यंत्र, सब्जियों की पौध रोपाई यंत्र, विभिन्न प्रकार के वीडर, स्पेयर्स एवं डस्टर्स, सिंचाई पम्प, चारा मशीन, रीपर, कम्बाईन, पावर थ्रेंसर तथा बिजली एवं डीजल से चलने वालं यंत्र किसानों द्वारा अपनाये जा रहे है जो काफी लागत में आते हैं अर्थात् काफी पैसों से आते हैं। इनका सही रख–रखाव किसानों के हाथों में नहीं रह गया है, जिनकी मरम्मत कराने के लिए समय–समय पर स्थानीय बाजारों के कारीगरों के पास जाना पड़ता है, इसलिए आज यह आवश्यक हो गया है कि किसान उपलब्ध कृषि यंत्रों एवं मशीनों को ठीक ढ़ग से रखरखाव एवं प्रयोग करें तथा प्रयोग के उपरान्त या बरसात के मौसम में जब कृषि यंत्र प्रयोग नहीं किये जा रहें हैं तब किसानों द्वारा उचित देख–रेख नहीं करने पर या लापवाही करने पर यंत्र खराब हो जाते हैं जिससे किसानों को आर्थिक हानि होती है जिसका किसानों को पता भी नहीं चलता है। बरसात के मौसम में तेज धूप, वर्षा, धूल एवं मिट्टी आदि के कारणों की वजह से कृषि यंत्रों में लोहे पर जंग, लकड़ी का फूल कर कमजोर होना, पेन्ट उतर जाना, चेन–स्प्रोकेट जाम हो जाना आदि कारणों से यंत्र खराब हो जातें हैं। अतः किसान भाई नीचे दी गई बातों पर ध्यान देकर बरसात के मौसम में उचित देखभाल करके कृषि यंत्रों एवं मशीनों को खराब होने से बचा सकते हैः

1. हस्त चालित यंत्रो/औजारो का भंण्डारण

- हस्तहस्त चालित यंत्रों का चुनाव करते समय निम्न बिन्दुओ पर विशेषकर ध्यान देना चाहिए।
- हस्त चालित औजारो से चोटो और दुर्घनाओं से बचना चाहिए।
- ये औजार ज्यादा समय तक अच्छी तरह कार्य करते हैं।
- हस्त चालित औजारो को बच्चों की पहुच से दूर होना अति आवश्यक है ताकि उन्हे किसी प्रकार की चोट एवं हानि ना हो।
- इन औजारो की आवश्यकता पड़ने पर उपलब्धता एवंसुचारूप से कार्य करेगे।
- अगर इम इन औजारो को किसी खुले स्थान पर छोड़ देते है तो कुछ प्लाटिक के भाग खराब हो जायेगे एवं जंग लग जाती है।
- हस्त चालित औजार में कुछ भाग {हत्थे} इधर उधर गिरने से टूट जायेगे जो निम्न धातु से बने होने है।
- अगर हम इन औजारो को खुले मे रखने हो तो इनकी धार कम हो जायेगी और जंग लगने की आशंका रहती है तथा इन औजारो की क्षमता घट जाती है।

अगर हम बड़ी मशीनो की बात करे तो उपकरणों मे सही प्रबन्धनों एवं संरक्षता ना होने पर इनके प्रयोगो में अधिक समय लगता है।

जैसेः कम्बाईन हारवेस्टर, ट्रैक्टर, सुगरकेन, हारवेस्टर, पावर टिलर,सीड़ ड्रिल, पोटेटो प्लान्टर, सोयाबीन, सिड.ड्रिल, लेजर लेबलर, वेल स्प्रेडर, प्रेशर, कल्टीवेटर, एम.वी.प्लाऊ, रिजमेकर, डिस्क हैरो, इत्यादि। इन मशीनों को अकसर हम बाहर छोड़ देते है जिससे नट, बोल्ट पर जंग/मिट्टी/एवं बारिश

कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर

पड़ने पर मशीनों के हिस्से खराब होने लगते है एवं जंग लगने की आंशका रहती है। प्रयत्न करे कि कार्य के बाद इनको अच्छी तरह एक बार पानी से साफ/स्वच्छ करके धूप में थोड़ी देर रखकर छत के नीचे रखें, अगर हो सके तो जंग बचाव वाले जगह का प्रयोग करें इससे ये यंत्र/मशीन लम्बे समय तक कार्य करेंगे/जहाँ जगह ना हो जैसे काले/प्लेड डिस्क/चेन उन पर पुराना तेल या ग्रीस लगाकर छोड़ सकते है तथा इससे इनमें जंग से सुरक्षा मिलेगी। मशीनों को रखते समय देख ले कि कोई हिस्से टूट.फुट या निकल गया हो तो उसे बदल दें। नट/बोल्ट चेन इत्यादि एवं ढीले होने वाले कल पूँर्जो कोकस दे अगर निकल गये हो तो लगा दें। इससे अगली बार इस्तेमाल करने में सुविधा होगी और ठीक करने पर समय, धन.खर्च नही करना पड़ेगा।

3. जुताई यंत्र का रख रखाव

जुताई यंत्रो को रखते समय कुछ खास बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। जैसे खेत की जुताई करने के बाद यत्रों का अच्छे से साफ एवं स्वच्छ करके रखना चाहिए जो कुछ भागो मे मिट्टी लगी रहती है। उसको भी साफ कर दिया जाना चाहिए।

4. बुवाई यंत्रो का रख–रखाव

बुवाई यंत्रो को रखते समय कुछ खास बातों का ध्यान रखना है। बीज और खाद दोनो नमी सोख कर लोहें की सीट को गला सकते है। बुवाई तथा खाद के बाद इन यंत्रो को अच्छी तरह से पानी से धोयें। अगर हवा मारने का कुछ प्रावधान हो तो हवा मार सकते है। उसके बाद धूप मे रख दे। पूर्ण रूप से सुखाने के बाद कुछ जगह पर जहाँ आवश्यकता है वहाँ पर ग्रीस/तेल लगाकर, कलपुर्जो को हानि नही होने से बचाया जा सकता है। {मीटरिंग यूनिट/{प्लोटिड रोलर} को सुनिश्चित करे कि वो भी पूरी तरह से साफ है या नही अगर नही किया है तो करदे। टय्ब को अलग निकाल कर रख सकते है तथा ध्यान रखें कि उनमे सीड न पड़े रहे नही तो वो खराब हो जायेगी अगर कोई वेल्ट हो तो उसको निकालकर अलग लटका सकते है और चैन इत्यादि पर ग्रीस लगा दे।

5. हारवेस्टिंग मशीन कर रख.रखाव

हारवेस्टिंग मशीनो को रखते समय कुछ खास बातो का ध्यान रखना पड़ता है। जैसे थ्रेशर को अच्छी तरह साफ करले। इक बार घुमाकर फसल के कुछ अवशेष को अच्छी तरह निकाल ले। इन मशीनों को पूरी तरह से इसके पूर्जो स्वच्छ एवं साफ करे तथा पानी से धोये और कुछ देर तक धुप में रखकर सुखा दे और अच्छीसे देख ले कि कोई हिस्सा या नट.बोल्ट इत्यादि ढीला या पेच गिर तो नही गये है तथा इनको मरम्मत करके रख दें और कुछ जगह पर चिकना तेल लगा दे। कुछ कुछ ग्रीस पोइटो मे ग्रीस भर दे तथा वेल्ट उतार दे। अगर टायर है तो कोशिश करे कि मशीन को उठाकर सर्पोट लगाकर रखें। टायर उपर रहने से खराब नही होगे। और छत के नीचे रखें। अगर ये सुविधा नहीं है तो तिरपाल या पोलीथ की पन्नी से लपेट कर रखे और अगर बिजली की मोटर लगी है तो ध्यान रहे कि उसमें पानी बिल्कुल ना जाये मसीन को धोते समय उसको ढककर रखें तथा थ्रेशर के पतनाले को सीधा कर दे। उसके फसल डालने वाले हिस्से को कपड़ा बाँध दे। जिससे कोई जीव.जन्तु ड्रम में ना जा सके तथा बिजली के तारो को लपेट कर किसी थैले मे बाँधकर रख दें।

6. छिड़काव यंत्र का रख.रखाव

फसल छिड़काव यंत्रो का भण्ड़ारण करते समय कुछ ध्यान रखें, जैसे मशीन को छिड़काव करने के बाद अच्छी तरह से धो लें। और पानी भरकर मशीन को अच्छी तरह से चलाये ताकि जिससे नोजल से पूरा केमिकल निकल जाये तथा लीवर इत्यादि भी अच्छी तरह साफ करले। केमिकल छिड़काव पर प्लास्टिक या मेटल से प्रतिक्रिया करके तनको खराब कर सकता है तथा छिड़काव यंत्रो को अच्छी तरह रखने से येंबच्चों की पहुच से भी दूर रहेंगे तथा फिल्टर पेपर को लपेटकर या बाँध सकते जहाँ भी ओपनिंग होती है वही पर कीट पतंगे घुसने की सम्भावना रहती है। इन यंत्रो को रखने से पहिले सब जोड़े को जो पाईप इत्यादि को टाइट करके रखले कि वो इटे या ढीले तो नहींहै। उनको या तो कस दे या बदल दे। अगर बैटरी लगी है तो उसको निकाल दे।

7. स्व शक्ति चालित उपकरणः

स्व शक्ति चालित मशीनों का ध्यान रखना महत्वपूर्ण है। ट्रैम्टर महत्वपूर्ण उर्जा का शक्तिस्रोत है। स्रोत का

ध्यान रखे तो कम खर्च में ज्यादा समय तक चलता रहेगा। प्रतिदिन तेल का चेक करना आवश्यक है और 15 मिनट बंद करने के बाद रेडियेटर का पानी चेक करे। तथा ऐयर क्लीनर को भी साफ तथा तेल यदि कम है तो भरें एव अगर गन्दा है तो साफ तेल से बदल दें। और हफ्ते में टायर प्रेशर भी चेक कर सकते है और फेन बेल्ट मे 12.16 मि.मी. का खिचाव से ज्यादा नही होना चाहिये अगर एयर फिल्टर में पानी भर गया है तो उसे निकाल दे। बैटरी का लेवल एवं ग्रीस तेल इत्यादि का नियमित परीक्षण करें।

8. प्रशिक्षण एवं मशीन चालक

अगर हम बड़ी मशीनो की बात करते है तो चालक से प्रशिक्षण को प्रथम स्थान पर है तथा कई बड़ी मशीनरी में कई चालक होते है। जो निरीक्षण करते समय हर एक उपकरण को सही संचालन की देख.रेख कर लेनी चाहिए। मशीनो को खरीदते समय एक बात का ध्यान रखना आवश्यक होना चाहिए और हर मशीन का कलपुर्जा का निरीक्षण कर लेना आवश्यक है। इसके बाद मशीन को कार्य पुस्तिक को विक्रेता से प्राप्त करना ना भूले। उससे मशीन का चलाना एव समझना आसान हो जाता है। और मशीन को सही ढंग से बनाये रखने की जानकारी प्राप्त हो जाती है तथा असुविधा होने पर कार्य पुस्तिका का प्रयोग कर सकते है।

9. मशीन का परीक्षण करे

किसी भी प्रकार की मशीन के भाग को आसपास सही तरीके से परीक्षण किया जाना चाहिए और समय.समय पर कलपुर्जो को जाँच कर लेना आवश्यक है। जिससे मशीन चलाते समय घर्षण को कम करें तथा उससे मशीन का रख.रखाव और लम्बे समय तक अच्छी रहती है तथा जाँच के पहले और सबसे महत्वपूर्ण में से एक है। जैसे पिस्टन पर अतिरिक्त तेल या उसमे संकेत देखे। तेल सील के आस पास लीकेज की जाँच करे सही बिन्दु का उपयोग करना सुनिश्चित करें तथा हर बिन्दु के लि लिये कई प्रकार के तेल और ग्रीस है। चिकनाहाट की जाँच करना बड़ी मशीनरी के साथ समस्याओ के निदान का एक अच्छा तरीका है तथा तेल को मसीन मे इस्तेमाल करते समय एक बार देख कर लिया जाना है। किसी भी दूषित पदार्थ का इ इस्तेमाल तो नही किया गया है अगर किया गया है तो उसे तुरन्त बहार निकाल दे।

10. यंत्रों कर सामान्य रख.रखाव

मिट्टी और गंदगी एंव कचरा अवशेषो को हटाने के लिए सभी उपकरणों को उच्च दाव/बेकुयम क्लीनर से अच्छी तरह से साफ किया जाना चाहिए। बचित कचरा और गंदगी आग के खतरो/ बिजली की खराबी से जंग और उपकरणों में जंग पैदा कर सकती है। जिसके परिणामस्वरूप अगले सीजन मे ब्रैकडाउन हो सकता है।

11.सभी स्व–चालित मशीनो पर सफाई के लिये महत्वपूर्ण है।

सभी एव स्वचालित मशीने पर सफाई का ध्यान रखना आवश्यक है जैसे कुछ इंजन कापार्टमेन्ट हीट एमसचेजर्स/रेड़ियेटर एवं नियत्रण केन्द्रो के कुछ क्षेत्र है। एक बार उपकरन साफ होने के बाद किसानो को अच्छी तरह से सेवा करनी चाहिये और मशीन की चिकनाकरनाचाहिए ओपरेशन/परफोर्मेंस चेक के अलावा गियर/बेल्ट लूज नट.बोल्ट आयल लीक और सभी हाजेज के कंडीशन भी जाँच करे। आँफ सीजन अगले व्यस्त मौसम के दौरान अनुचित समय बचने के लिए उन आवश्यक मरम्मत और समायोजन करने का समय है। अक्सर लाग् करने वाले डीलर आँफ सीजन के दौरान सेवा विशेष प्रदान करते है।, जिसका अर्थ वास्तविक बचत हो सकता है।

खँरोच वाले या खुदरे क्षेत्रो में टच.अप पेंट लगाने का भी यह एक अच्छा समय है। उचित रूप से बनाए रखने वाले उपकरण जो अच्छे लगते है वे एक उच्च व्यापार मूल्य का आदेश देंगे जब किसान इन मशीनो को बदलने कर फैसला करता है। जब कई चालक जंग और आक्लीकरण जैसे तत्वों से उपकरणों की रक्षा में मदद करने के लिए एक कर्मचारी साथ एक अच्छे सफाई का पालन करते है सबसे महत्वपूर्ण बात है जब यंत्रो की सावधानीपूर्ण जाँच की जाती है तो छोटी समस्याओं की पहचान की जा सकती है। और उन्हे अगले सीजन में चलाने से पहिये ठीक किया जाता है।

12. कृषि यंत्रो का उचित चुनाव

कृषि यंत्रो का चुनाव करते समय निम्न बिन्दुओ पर

विशेषकर ध्यान देना चाहिए

- मशीन खेती के कार्य को करने मे पूणरूप से सक्षम हो।
- मशीन मे लगने वाली उर्जा या शान्ति कर भरपूर उपयोग कार्य करने के लिये होना चाहिए जिससे उसकी कार्य कुशलता अधिक से अधिक मिल सके।
- मशीन चलाने के प्रक्षित व्यक्ति को ही होना चाहिए।
- मशीन के कल.पूर्जो की बनावट अच्छी तरह से बनी होनी चाहिये ताकि लम्बे समय तक प्रयोग मलाया जा सके।
- यंत्रो की मरम्मत का खर्च कम से कम हो और उसे स्थानीय कारीगर से ठीक कराया जा सके तथा उसका रख.रखाव भी आसान हो।
- मशीन में सुरक्षा के पपन्ति पुवधन हो जिसमे कम से कम दुर्घटनाओ की कमो हो।
- मशीन को खरीदते समय उसकी गुणवता का ध्यान रखना आवश्यक है तथा निर्माता से पूछ लिया जाना आवश्यक है उसके बाद खरीदी जानी चहिए।

13. कृषि यंत्रों का उपयोग के बाद एंव भंण्ड़ारण में रखते समय का रख.रखाव

यंत्र का प्रयोग करने के बाद प्रतिदिन ठीक प्रकार से साफ कर लेना चाहिए ताकि धुल, मिट्टी आदि निकल जाये खासतौर से मोटर, प्रेशर, सीड़.ड्रिल आदि के लिए यह जरूरी है। सीड.ड्रिल आदि के उपयोग के बाद टंकी व अंदरूनी भागो को भी अच्छी तरह साफ करना चाहिए, ऐसा करने से यंत्र की सेवा आयु बढ जाती है और मशीन को अच्छी तरह साफ करके शेड के अन्दर सूखी जगह पर रखें। मशीन के जिन भागों को नुकसान पहुचने की सम्भावना हो उनको निकाल कर अलग सुरक्षित स्थान पर रखें! तथा कृषि यंत्रो एवं मशीनो के नट.बोल्ट वॉशर आदि को प्रतिदिन देखना जरूरी है यदि कोई नट.बोल्ट ढीले मिले तो उनको कस देना चाहिए।

मशीन मे तेल पानी बदलने का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। ट्रैक्टर, पावर टिलर, कम्बाईन आदि से यह अति आवश्यक है। गियर बाक्स, ईजन तथा एयर क्लीनर मे तेल का माप देखते रहना चाहिए। यदि कम हो या बदलना हो तो उचित प्रकार से तेल से पुर्ति करनी चाहिए। मशीन के रेडियेटर मे पानी का उचित प्रबन्ध रखान चाहिए। इससे मसीन के कार्य में बीच मे रूकावट नही आएगी। टायर में हवा का दबाव टीक रखना चाहिए।

बरसात के मौसम मे नुकसान से बचाने के लिए मशीन मे धातु वाले हिस्सों को जंग प्रतिरोधी पेन्ट से रंग दे। जिससे मसीनो मे टायर के पहिये है। उन्हे जमीन से ऊँचा इस प्रकार रखे की पहिऐ जमीन के उपर रहे। तथा मशीन के नीचे लकड़ी या पत्थर लगाकर रख दे, जिससे उसमे गिरने का आदेशा ना रहे और बच्चों तथा जानवरों के साथ दुर्घटना ना हो सके।

यदि किसान अपने उपलब्ध कृषि के उन्नत यंत्र एवं मशीनों को कृषि कार्यो के उपरान्त या बरसात मौसम शुरू होने से पूर्व उपरोक्त बातों को अपना कर अमल करे तो अपने कृषि यंत्रों की आयु बढ़ा सकते हैं तथा शीघ्र खराब होने से बचा कर काफी वर्षो तक प्रयोग कर सकते हैं, जिससे प्रति वर्ष कृषि यंत्रों के ऊपर खर्चो को कम किया जा सकें।

(पृष्ठ 08 का शेष)

का बाजारो में विपणन भी करती है।

गैनोडर्मा मशरूम का भंडारण

गैनोडर्मा मशरूम का भंडारण तुड़ाई के 2 दिन बाद तक बिना रेफ्रिजरेटर के भी किया जा सकता है, किन्तु अगर आप अधिक समय के लिए भंडारण करना चाहते है, तो रेफ्रिजरेटर का इस्तेमाल अवश्य करे। आरम्भ में मशरूम मुलायम और गूदेदार होता है, लेकिन सूख जाने पर यह कठोर हो जाता है, जिससे अगर आप चाहे तो इसे सुखाकर भी अधिक समय तक भंडारित कर सकते है।

गैनोडर्मा मशरूम की खेती से आमदनी

गैनोडर्मा मशरूम की खेती में आमदनी में कमी का कोई सवाल ही नहीं उठता क्योंकि यह मशरूम मार्केट में हमेशा 4 हजार से 5 हजार रुपए प्रति किलो बिकता है। इसका उपयोग दवाई बनाने में भी खूब होता है। इस तरह गैनोडर्मा मशरूम की एक बार की बुआई में लाखों की कमाई कर सकते हैं।

खरपतवारों की रोकथाम के लिए स्प्रे तकनीक प्रबंधन

सोमेंन्द नाथ* एवं संदीप कुमार**

फसलों के उत्पादन में शाकनाशियों का विशेष महत्व है क्योंकि खरपवार उनके प्रकार व घनत्व के आधार पर फसलों की पैदावार 15–90 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं। शाकनाशियों की मात्रा फसल की अवस्था, क्षेत्रफल के अनुसार एवं खरपतवार की अवस्था पर निर्भर करती है और मात्र की संस्तुति करते समय यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि शाकनाशी के अवशेषों का अगली फसल पर कोई दुष्प्रभाव न पडे और खरपतवारों का पूरी तरह नियंत्रण हो जाए। आमतौर पर कीटनाशक व फफूँद नाशक दवाओं का फसल पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। शाकनाशियों की कम व ज्यादा मात्रा से खरपतवार नियंत्रण के लिए मुसीबत पैदा हो जाती है। वैज्ञानिक रुप से यह साबित हो चुका है कि खरपतवार नियंत्रण प्रक्रिया में 50 प्रतिशत केवल दवाई का सहयोग होता है और बाकी 50 प्रतिशत स्प्रे संबंधित प्रणाली का होता है। इसीलिए स्प्रे संबंधित प्रबंधन की जानकारी खरपतवार नियंत्रण के लिए अति महत्वपूर्ण है। उचित दवाई के चुनाव के बाद तीन बातें जरुर ध्यान रखनी चाहिए।

- दवाई की उचित व एक समान मात्रा पौधों के उपर गिरनी चाहिए।
- दवाई पौधों के उपर ठहरनी चाहिए।
- दवाई की पूरी मात्रा पौधों के अन्दर तक जानी चाहिए।

उपरोक्त तीनों बातें स्प्रे संबंधित 50 प्रतिशत हिस्सेदारी की भूमिका सुनिश्चित करती है। स्प्रे करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना बहुत जरुरी है ताकि फसल को बिना किसी नुकसान के संतोषजनक खरपतवार नियंत्रण हो सके।

1. खेत में नमीः

खरपतवार उगने से पहले व उगने के बाद स्प्रे करने वाले शाकनाशियों के लिए खेत में नमी होना अति आवश्यक है। खरपतवार उगने से पहले स्प्रे करने वाले शाकनाशी की सफलता केवल खेत में नमी पर निर्भर करती है। जैसे एट्राजीन, पैंडीमिथेलीन, मैट्रीब्यूजीन या अन्य शाकनाशी जो भी खरपतवार आने से पहले स्प्रे किए जाते हैं। उनके लिए नमी अत्यंत आवश्यक है। घास उगने के बाद प्रयोग में लाए गए शाकनाशियों के लिए भी खेत में नमी महत्वपूर्ण है। नमी की स्थिति में खरपतवारों की बढ़वार तेजी से होती है और दवाई पूरी तरह पौधे के अन्दर पहुंचकर अच्छा नियंत्रण करती है।

2. खरपतवार की अवस्था :

शाकनाशी हमेशा वैज्ञानिकों द्वारा बताई गई समय सीमा के अन्दर ही स्प्रे करना चहिए या खरपतवार की बढ़वार की स्थिति को ध्यान में रखकर स्प्रे करना चहिए। जैसे गेहूँ में खरपतवार उगने के बाद शाकनाशियों का स्प्रे बीजाई के 30–35 दिन के अंदर स्प्रे करना चहिए। गन्ने में मोथा घास के नियंत्रण के लिए सिफारिश दवा सैम्परा (हैलोसल्फयूरान मिथाईल) का स्प्रे बसंतकालीन व पछेती बीजाई के लिए पहले पानी के बाद या मोथा घास की 3–5 पत्ती अवस्था में ही स्प्रे करना चाहिए। इसके बाद स्प्रे करने से पूरा नियंत्रण नहीं होगा। मक्का के लिए सिफारिश दवा लाउडिस (टैम्बोट्राइआन) को बीजाई के 25–35 दिन के अंदर या खरपतवार की 3–4 पत्ती अवस्था में स्प्रे करना उचित पाया गया है। खरपतवार की बढ़वार ज्यादा होने से दवाई का पौधे में संचरण पूरी तरह नहीं होता और पूरी दवाई सही जगह पर नहीं पहुंचने के

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र बलिया, **वरिष्ठ वैज्ञानिक (पादप सुरक्षा) कृषि विज्ञान केंद्र अमहित जौनपुर–।। आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

कारण खरपतवारों का पूरा नियंत्रण नहीं हो पाता तथा प्रतिरोधिता उत्पन्न होने का खतरा बढ़ता है।

3. खरपतवारों की संख्या व प्रकार से खरपतवारनाशक का चुनावः

खेत मे मौजूद खरपतवारों की संख्या व प्रकार के हिसाब से ही दवाई का चयन करना चाहिए। संकरी व चौड़ी पत्ती वाले तथा सैजिज के लिए अलग–अलग दवाईयों की सिफारिश की गई है। अगर खेत में संकरी व चौड़ी पत्ती वाले दोनों तरह के खरपतवार है तो उनके लिए मिश्रित शाकनाशी सिफारिश किए गए है। गेहूं में संकरी पत्ती वालों के लिए फिनोक्सापरोप, क्लोडीनाफोप, पिनोकसाडेन व सल्फोस्लफयूरान तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए 2, 4–डी, मैटसलफ्यूरान व कारफैन्टराजोन तथा दोनों तरह के खरपतवारों के लिए टोटल, एटलांटिस, वैस्टा, अकोरडप्लस व पैंडीमिथेलीन सिफारिश किए गए है।

4. फसल खरपतवार प्रतियोगिता की अवधि की जानकारीः

किसी भी तरह के संतोषजनक खरपतवार नियंत्रण के लिए उस फसल की खरपतवार प्रतियोगिता की अवधि की जानकारी होना अति महत्वपूर्ण है। क्योंकि फसल की पूरे फसलकाल की बजाय एक निश्चित अवधि के दौरान खरपतवार मुक्त रखकर कर अच्छी पैदावार ली जा सकती है। विभिन्न फसलों के लिए निम्नलिखित प्रतियोगिता अवधि दी गई है–

फसल	अवधि
धान	50 दिन
मक्का	35 दिन
गन्ना	120 दिन
गेहूं	50 दिन
सरसो	50 दिन
मूंगफली	35 दिन
मटर	60 दिन
उर्दू	40 दिन
चना	60 दिन
मसूर	60 दिन
अरहर	65 दिन

इस अवधि के बाद कोई गुड़ाई व शाकनाशी का स्प्रे करने की जरुरत नहीं है।

5. अन्तः फसलीकरण में शाकनाशी का चुनावः

अन्तः फसलीकरण में वही शाकनाशी प्रयोग में लाया जाना चाहिए जो दोनों फसलों के लिए सुरक्षित हों। जैसे मक्का के साथ अन्तःफसलीकरण में पैंडीमिथेलीन, बीजाई के 2–3 दिन के अन्दर ही स्प्रे करना चाहिए। मक्का के साथ अन्तः फसलीकरण में एट्राजीन व सैम्परा लोडिस दवाई का प्रयोग न करें। इसी प्रकार गेहूं व गन्ना अन्तः फसलीकरण में केवल सल्फोसल्फयूरान व एलग्रिप दवाई का प्रयोग करें और गेहूं के अन्य सिफारिश किए गए अन्य किसी शाकनाशी का प्रयोग न करें।

6. दवाई की सही मात्रा व सही समय पर स्प्रे करनाः

सही खरपतवार नियंत्रण के लिए दवाई की सिफारिश मात्रा से न ही कम व ज्यादा मात्रा का प्रयोग नहीं करना चाहिए। दवाई की मात्रा फसलों के अनुसार व फसल चक्र को ध्यान में रखकर की जाती है। स्प्रे करने का समय गर्मियों में सुबह 7 से 10 बजे तक तथा शाम को 5 से 7 बजे तथा सर्दियों मे सुबह 11 बजे से शाम 4 बजे तक उचित पाया गया है। इस दौरान पत्तों के सुराख खुले रहते है।

7. चिपचिपा पदार्थ मिलानाः

शाकनाशी को पत्तों पर ज्यादा समय ठहरने के लिए काफी शाकनाशकों के साथ चिपचिपा पदार्थ मिलता है और वह दवाई के साथ सिफारिश मात्रा में जरुर डालना चाहिए अन्यथा शाकनाशी पत्तों पर नहीं रुकेगा और बहकर नीचे जमीन पर गिर जायेगा तथा दवाई की पूरी मात्रा पौधों के अन्दर नहीं जा पायेगी। निम्नलिखित फसलों में दवाई के साथ चिपचिपा पदार्थ

की सिफारिश की गई है।

8. सही घोल बनानाः

दवाई को कभी भी सीधे स्प्रे पंप में नहीं मिलाना चाहिए। क्षेत्रफल के हिसाब से जितनी टंकी लगानी है। एक लीटर पानी के उतने माप एक अलग बाल्टी में डाले तथा बाल्टी में दवाई घोलें। दवाई वाली बाल्टी में से एक नाप स्प्रे टंकी में डालें और हर बार दवाई वाली बाल्टी के घोल को अच्छी तरह मिलायें। इससे हर टंकी में दवाई की सही मात्रा अपने आप डल जायेगी। उचित मात्रा (200 लीटर प्रति एकड) में पानी का उपयोग करें।

9. नोजल का चुनावः

स्प्रे तकनीक का सबसे मुख्य अंग नोजल का चुनाव बताया गया है। कीटनाशकों व फफूंदनाशक के स्प्रे के लिए होलोकोन नोजल या गोल नोजल सही पाई गई है। खरपतवार उगने से पहले फलड कट नोजल या फसवित नोजल तथा खरपतवार उगने के बाद फलैटफैन नोजल उचित पाई गई है। इन नोजलों से स्प्रे करते समय कुछ सावधानियां जरुरी हैं। फलडकट नोजल से स्प्रे असमान होता है और किनारों पर छिडकाव कम होता है जिससे किनारों पर 50 प्रतिशत क्षेत्र में दोबारा छिड़काव संभव होना चाहिए। फलैट फैन नोजल से भी किनारों पर स्प्रे कम होता है। अतः एक समान छिडकाव करने के लिए किनारों के साथ 30 प्रतिशत क्षेत्र में दोबारा छिडकाव करना जरुरी है। इसका उपयोग एक से ज्यादा नोजलों वाले बूम के साथ करना उपयुक्त है। ईवन फलैट नोजल के द्वारा स्प्रे बराबर होता है और इस नोजल का प्रयोग मुख्यतः कतारों वाले पौधे, फसलों और सब्जियों में एक बार स्प्रे करने के लिए होता है।

10. छिड़काव करते समय बूम की स्थितिः

अक्सर यह देखा गया है कि स्प्रे करने वाला व्यक्ति अकेले नोजल वाले बूम को लहराकर छिड़काव करते हैं। ऐसा करने से दवाई का छिड़काव समान रुप से नहीं होता और छिड़काव की मात्रा कहीं कम व कहीं ज्यादा होती है। इससे फसल पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है तथा खरपतवारों में प्रतिरोधकता की समस्या बढ़ने की आशंका बढ़ जाती है। इसीलिए स्प्रे करते समय यह ध्यान रखें कि दवाई का छिडकाव समान व एकसार होना चाहिए।

11. स्प्रे की उचांईः

स्प्रे की उचांई लक्ष्य पर स्प्रे करने के अनुरुप होनी चाहिए। शाकनाशी के अच्छे नतीजे के लिए स्प्रे उँचाई का बहुत महत्व है। अगर बूम की उचांई भूमि के ज़्यादा नजदीक है तो स्प्रे बराबर नहीं होता। उपयुक्त उचांई नहीं होने की स्थिति में कही पर दवाई की मात्रा ज्यादा होने से फसल जल सकती है और कहीं खरपतवारों पर कोई असर नहीं पड़ता। अगर फलैट फैन नोज़ल के साथ अनेक नोज़लों वाली बूम का प्रयोग कर रहे हैं तो उचांई और नोजल के कोण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। अगर नोजल का कोण 80 डिग्री हो तो नोजल को 45 सैमी. की उचाईं पर रखने पर फासला 50 सैमी. होना चाहिए। जिस नोजल का कोण 110 डिग्री हो तो नोजल को 50 सैमी. की उचाईं पर रखने पर फासला 75 सैमी. होना चाहिए।

12. स्प्रे के माप–तोल को प्रभावित करने वाले कारकः

छिड़काव की मात्रा, छिड़काव की गति व नोजल की कार्यक्षमता स्प्रे यंत्र, दबाव पर आधारित होती है। स्प्रे की मात्रा गति के विपरीत अनुपात में होता है। गति के बढ़ने पर शाकनाशी की मात्रा घट जाती है। नोजल क्षमता, समान दबाव, गति होने पर शाकनाशी की मात्रा सही अनुपात में खरपतवार पर पड़ती है। नोजल से निकास होने वाली शाकनाशी की मात्रा इसकी क्षमता के साथ बढ़ती है। समान बहाव के साथ स्प्रे हेतु पम्प पर समदाब वाल्व लगाएं।

13 स्प्रे करने की दिशाः

सीधी दिशा में एक सार स्प्रे करें। आडा–तिरछा छिड़काव न करें। खेत में पूरा छिड़काव एक ही दिशा में करें। दोनों दिशाओं में स्प्रे न करें।

14. नोज़ल का रखरखावः

नोज़लों को कभी भी तार या नुकीली वस्तु से साफ न करें। इससे नोजल क्षतिग्रस्त हो जाएंगी और स्प्रे असमान होगा।

15. शाकनाशियों का मिश्रण बनानाः

सिफारिश के अनुसार की दवाईयों का मिश्रण तैयार करने के बाद ही स्प्रे करें अन्यथा फसल जल सकती है। गेहूं में 2, 4–डी या मैटसल्फयूरान को प्रतिरोधिता वाले क्षेत्रों के लिए सिफारिश शाकनाशियों के साथ मिलाकर स्प्रे ना करें।

16. स्प्रे पम्प की जांचः

स्प्रे करने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि इसमें कोई पहले स्प्रे का अवशेष तो नहीं है व उसे अच्छी तरह साफ ताज़े पानी से धोएं। विशेष शाकनाशियों (राउंडअप, ग्रामोक्सोन व एट्राजीन) के इस्तेमाल करने के बाद स्प्रे पम्प को कई बार धोएं। स्प्रे पम्प को अच्छी तरह से हिलाकर धोएं और कोई भी स्प्रे करने के बाद उसे अवश्य धोएं।

17: कुछ शाकनाशी जैसे गलाइफोसेट व ग्रामोक्सोन जो सर्वनाशी शाकनाशी की श्रेणी में आते हैं ऐसे शाकनाशियों को भी फसलों में स्प्रे हुड लगाकर स्प्रे कर सकते हैं। इनका उपयोग केवल उन्हीं फसलों में किया जा सकता है जिन्हें लाइनों में लगाया गया है व लाईनों के बीच में काफी जगह होती है। फसल प्रतियोगिता अवधि के दौरान अगर मौसम साफ नहीं हैं और निराई–गोडाई के लिए उपयुक्त नही है तथा खरपतवार की बढ़वार निधार्रित मापदंड से ज्यादा हो गई है तो ऐसी स्थिति में स्प्रे हुड लगाकर उपरोक्त शाकनाशियों का भी स्प्रे किया जा सकता है।

नोजल क्षमताः समान दबाव,गति होने पर शाकनाशी की मात्रा सही अनुपात में खरपतवार पर पड़ती है। नोजल से निकास होने वाले शाकनाशी की मात्रा इसकी क्षमता के साथ बढ़ती है।

18. स्प्रे पम्प की सफाई

- स्प्रे पम्प को साफ पानी से अच्छी तरह हिलाकर धोएं।
- कोई भी स्प्रे करने के बाद उसे अवश्य धोएं।
- नोजल बूम को स्प्रे के माध्यम से साफ करें।
- स्प्रे करने व नई दवा के प्रयोग करने से पहले सुनिश्चित कर लें कि इसमें कोई पहले स्प्रे का अवशेष तो नहीं है। व उसे अच्छी तरह साफ ताजा पानी से धोएं। विशेष शाकनाशीयों के इस्तेमाल पर स्प्रे पम्प को कई बार धोएं।

शाकनाशियों से सुरक्षा

- चमड़ी को रसायनों के सम्पर्क में न आने दें, दस्तानों व मास्क का उपयोग करें।
- आखँ व महुँ को रसायनों से बचाएं, सम्पर्क होने पर साबनु से धोऐ।
- स्प्रे करते वक्त खाना, पीना व धूम्रपान न करें।
- स्प्रे करने से पहले जूते, शरीर को पूर्ण रुप से ढ़कने वाले कपड़े, चश्में व मास्क का उपयोग करें।
- स्प्रे करने के उपरान्त सारे कपड़े बदलने चाहिएं और स्नान करना चाहिए।
- शाकनाशीयों के डिब्बे, पैकेटों व अवशेषों को बच्चों से दूर रखे व जमीन में दबा दें।

इन सावधानियों के साथ–साथ दवा की मात्रा, उचित समय, उपयुक्त तरीकों का सख्ती से पालन करें।

चना फसल के प्रमुख रोग एवं प्रबन्धन

मनीष कुमार मौर्य*, पी. के. मिश्र** एवं राम लखन सिंह***

भारत में चना का दलहनी फसलों में एक प्रमुख स्थान है। इसका वनस्पति नाम साइसर एराइटिनम है। चना का उपयोग मानव के पोषण में प्रोटीन के महत्वपूर्ण स्त्रोत के रूप में किया जाता है। इसमें 2 प्रतिशत प्रोटीन, 6.5 प्रतिशत शर्करा व 4.5 प्रतिशत वसा है। यह फसल जैविक नाइट्रोजन निर्धारण द्वारा मिट्टी की उर्वरता में सुधार करता है। चने की फसल की कुछ मुख्य बीमारियां जो की उत्पादन की दृष्टि से काफी हानि पहुँचाता है जैसे एस्कोकाइटा ब्लाइट, उकठा रोग, बोट्राइटिस ग्रे मोल्ड, मूल विगलन रोग आदि।

चौंदनी (एस्कोकाइटा ब्लाइट): यह रोग एस्कोकाइटा रैबी नामक फफूंद से होता है। इस रोग का लक्षण पौध के हर भाग जैसे पत्ती, फली एवं तना पाया जाता है। मुख्यतः यह बीमारी फूल आने की अवस्था पर लगती है। प्रभावित पौधों के प्रत्तियों एवं फली प्रर भूरे रंग के गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में यह धब्बे पत्तियों पर फैल जाते है। फली में यह धब्बे छल्लों के आकार के दिखते हैं। प्रभावित पौधे जल्द ही सूखकर मर जाते हैं।

रोकथाम

- रोग प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करना चाहिए।
- बीज को बविस्टीन और थीरम (1:2) को 2.5 ग्रा० प्रति किग्राा० बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।
- जैव नियंत्रण के लिए ट्राइकोडर्मा 4 ग्रा० प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

उकठा रोग: यह रोग फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम नामक फफूँद से होता है। बीमारी में प्रभावित पौधा सूख जाता है तथा जड़ों के अन्दर का रंग भूरा हो जाता है।

रोकथाम के उपाय

- गर्मियों में मिट्टी पलट हल से जुताई करनी चाहिए।
- बुवाई से पूर्व ट्राईकोडर्मा 2.5 किग्रा0/हे0 60–75 किग्रा० सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर भूमि शोधन करना चाहिए।
- बीज को थीरम 75 प्रतिशत डब्लूएस0 और कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लूडपी0 को 2:1 के अनुपात में मिलाकर 3.0 ग्राम/किग्रा बीज की दर से उपचारित कर के बोना चाहिए अथवा ट्राईकोडर्मा 4.0 ग्राम/किग्रा बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।
- फसल चक्र अपनाते हुए उकठा के बचाव हेतु अवरोधी एवं के0डब्लूफआर0–08 प्रजाति की बुवाई करनी चाहिए।

धूसर फफूंद (बोट्राइटिस ग्रे मोल्डो): यह रोग बोट्राइटिस सिनेरिया नामक फफूंद से होता है। सामान्तरू इस रोग का संक्रमण। फरवरी–मार्च के महीने में फूल लगने की अवस्था में होता है। पौधे के ऊपरी भाग व फूल इससे अति संवेदनशील होते हैं। इसके लक्षण शुरूआत में तने, पत्ती, फूल, व फली पर हरे या गहरे भूरे रंग के घब्बे दिखाई देते हैं उस जगह पर पौधा गल या मर जाता है। संक्रमित पौधे में फूल छड़ जाते है अथवा फली नहीं बनती।

रोकथाम

- रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करना चाहिए।
- रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम या मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत की दर से 2 से 3 बार 1 सप्ताह के अंतराल पर छिड़काव करें।
- संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें।
- आवश्यकता से अधिक सिंचाई न करें।

मूल विगलन रोग: यह रोग राइजोक्टोनिया सोलेनाई नामक फफूंद से होता है। इस रोग से ग्रसित पौधे की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा मुरझाकर मर जाते हैं। संक्रमित पौधे आसानी से उखड़ जाते हैं। इस रोग का संक्रमण मुख्यतः पौध अवस्था में अधिक होता है।

रोकथाम

- रोग प्रतिरोधी का प्रयोग करना चाहिए जैसे करक 1।
- गर्मी के महीनों में 2 से 3 बार गहरी जुताई करनी चाहिए।
- रोग ग्रसित पौधे व अवशेषों को जला देना चाहिए।
- सिंचाई करने से इस बीमारी का रोकथाम किया जा सकता है।
- फूल व फली बनने के समय उचित नमी बनाए रखें।
- ट्राइकोडर्मा से बीज को 5 ग्रा0 प्रति किग्रा की दर से उचारित कर जैविक नियंत्रण किया जा सकता है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा), **प्रभारी, ***विषय वस्तु विशेषज्ञ/एसो. प्रो. (शस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, मनकापुर, गोण्डा (उ0प्र0) 274302

कद्दूवर्गीय सब्जियों में प्रभावशाली कीट और रोग प्रबंधन

प्रदीप कुमार एवं प्रवीन कुमार

कद्दूवर्गीय सब्जियों को मानव आहार का एक अभिन्न अंग माना गया है। एक आदमी को रोजाना 300 ग्राम सब्जियां खानी चाहिए परन्तु भारत में इसका 1/9वां भाग ही मिल पाता है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की उपलब्धता साल में आठ से दस महीने तक रहती है। इसका उपयोग सलाद रूप में (खीरा, ककड़ी), पकाकर सब्जी के रूप में (तोरई, करेला, परपल) मीठे फल के रूप में (तरबूज व खरबूजा) मिठाई बनाने में (पेठा, परवल, लौकी) अचार बनाने में (करेला) प्रयोग किया जाता है। इन सब्जियों में विभिन्न प्रकार के कीट व रोगों, सूत्रकृमियों एवं खरपतवारों के कारण लगभग 30 प्रतिशत नुकसान होता है। कद्दूवर्गीय सब्जियां गर्मी तथा वर्षा के मौसम की महत्वपूर्ण फसलें हैं। यद्यपि कद्दूवर्गीय सब्जियों का उत्पादन अच्छा होता है, परन्तु अधिक नमी और उचित तापमान मिलने के कारण कीट व रोग का प्रकोप अधिक रहता है, बहुत से कीट एवं व्याधियाँ कद्दूवर्गीय सब्जियों के उत्पादन को प्रभावित करते हैं तथा कभी–कभी प्रबंधन के अभाव में पूरी फसल को नष्ट कर देते हैं। अतः इन कीटों व रोगों का उचित समय पर उपयुक्त प्रबंधन करना आवश्यक है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की फसलों में लगने वाले कीट व रोग इस प्रकार हैं।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

फल मक्खी : यह मक्खी फलों पर अण्डे देती है तथा बाद में लार्वा फलों में घुसकर उन्हें अन्दर से खाते रहते है। इसकी रोकथाम के लिए खेत की निराई करके प्यूपा को नष्ट कर दें। ग्रसित फलों को भी एकत्रित करके नष्ट कर दें। मक्खियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो इमिडाक्लोप्रिड 1.0 मि.ली. प्रति 3 लीटर तथा 1 प्रतिशत चीनी/गुड़ (10 ग्राम प्रति लीटर) से बनाकर 50 लीटर प्रति हैक्टयेर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए 10 से 15 फेरोमैन ट्रेप (मिथाइल यूजिनोल) प्रति हैक्टेयर का प्रयोग भी किया जा सकता है। बेलों पर मैलाथियान 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

लाल कद्दू भृंग : यह कीट फसल की प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों को खाता है। वयस्क कीट पत्ते में टेढ़े–मेढ़े छेद करके पौधों की जड़ों, भूमिगत तने व भूमि से सटे फलों को नुकसान पहुंचाते हैं। फसल की अगेती बुवाई से कीट के प्रभाव को कम किया जा सकता है। संतरी रंग के भृंग को सुबह के समय इकट्ठा करके नष्ट कर दें। इनसे बचाव के लिए फसल पर कार्बोसल्फान नामक कीटनाशी का 1.5 से 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर सुबह के समय छिड़काव करें। भूमिगत शिशुओं को नष्ट करने के लिए क्लारोपायरीफॉस 20 ईसी. 2.5 लीटर प्रति हैक्टेयर हल्की सिंचाई के साथ इस्तेमाल करें और फसल खत्म होने पर बेलों को खेत से हटाकर नष्ट कर दें।

सफेद मक्खी : इस कीट के शिशुओं व वयस्कों द्वारा रस चूसने से पत्ते पीले पड़ जाते हैं। इनके मधुबिन्दु पर काली फफूंद आने से पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल.1.0 मिली प्रति 3 लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यूपी 2.0 मिली. प्रति लीटर या स्पिनोसैड 45 ए.स.सी. 1.0 मिली. प्रति 4 लीटर पानी का छिड़काव कर इल्लियों कों नष्ट कर दें। नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या बी. टी. 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

चेंपा : लगभग सभी कद्दूवर्गीय फसलों पर आक्रमण करते हैं। ये पौधों के कोमल पत्तियों व पुष्पकलिकाओं

विषय वस्तु विषेशज्ञ (फसल सुरक्षा एंव उद्यान), कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहना, सिद्धार्थनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एंव प्रोद्यौगिकी विश्वविधालय, कुमारगंज, अयोध्या– 224229

से रस चूसकर फसल को हानि पहुंचाते है। यह कीट वायरस जनित बीमारियों के वाहक का कार्य करती हैं। इसकी रोकथाम के लिए नाइट्रोजन खाद का अधिक प्रयोग न करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 1.0 मिली. प्रति 3 लीटर या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मिली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

माईट या बरूथी कीट : इस कीट का प्रकोप मानसून पूर्व गर्म मौसम में प्रायः देखा जाता हैं। बरूथी का आक्रमण पत्तियों की निचली सतह पर होता हैं, जहाँ यह शिराओं के पास अण्डे देती हैं। वयस्क, पत्तियों का रस चूसती हैं तथा अपने चारो और रेशमी चमकीला जाल तैयार कर लेती हैं। बरूथी ग्रस्त पत्तियों की शिराओं के आसपास का क्षेत्र पीले रंग का हो जाता हैं। कीट प्रकोप की तीव्र अवस्था में पत्तियॉ चितकबरी होकर चमकीली पीली हो जाती हैं। पत्ती पर बने जाले पर मिट्टी के कारण जमा हो जाते हैं। इस अवस्था में पौधे से पत्तियों का गिरना शुरू हो जाता हैं। फलस्वरूप कद्दूवर्गीय सब्जियों की वृद्धि एवं उपज दोनों पर विपरीत प्रभाव पड़ता हैं। इस कीट के नियंत्रण के लिए गंधक के चूर्ण या घुलनशील गंधक (0.2) का छिड़काव करना चाहिए। मिथाइल पैराथियान (0.2) या फोसालिन (0.2) का छिड़काव भी प्रभावकारी रहता हैं अथवा टोवासिन 200 मि0ली0 पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिये।

सर्पाकार पर्ण खनक (सुरंगक) कीट : कद्दूवर्गीय सब्जियों तुरई, लोकी, खीरा, करेला आदि फसलों में इस कीट से बहुत अधिक नुकसान होता हैं। कीट की लटें पत्ती की बाहरी तवचा के नीचे सर्प के आकर की तरह टेढ़ीमेढ़ी सुरंगे बनाती हैं। कीट द्वारा पत्ती पर अंडे देने के 3–4 दिन बाद पतली– पतली सुरंगे बनना प्रारंभ हो जाती हैं। धीरे– धीरे ये सुरंगे चौड़ी होकर पत्ती की पूरी सतह पर फैल जाती हैं। इस कीट की रोकथाम के लिए किसानो को कीट ग्रस्त पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए। इन कीटों के प्रबंधन के लिए 750 मि.ली. ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. या 650 मि.मी. डाईमेथोएट 30 ई.सी. प्रति हैक्टेयर 250 लीटर पानी में फल लगने से पूर्व छिड़काव करना चाहिए।

दीमक : यह सूखे की स्थिति में पौधें की जड़ों तथा तने को काटती हैं। जड़ काटने से पौधें सूख जाते है। नियंत्रण हेतु खड़ी फसल में प्रकोप होने पर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ईसी रसायन की 6–6.50 ली0/हे., इमिडाक्लोप्रिड 1.0 लीटर मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से सिंचाई पानी के साथ प्रयोग करें।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

चूर्णिल आसिता : इस रोग के कारण कद्दूवर्गीय सब्जियों की बेलों व पत्तियों पर तथा अधिक प्रकोप होने की स्थित में डण्ठलों व फलों पर सफेद चूर्ण सा जमा हो जाता है। इससे फलों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियाँ सुखना प्रारम्भ हो जाती है। फल भी कमजोर हो जाते है तथा पैदावार कम हो जाती है। यह रोग मुख्य रूप से वायु से एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलता है। रोग के रोकथाम के लिए केराथेन एल.सी. 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा आवश्यकता पड़ने पर 15–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव को दोहराना चाहिए। इस रोग की रोकथाम सल्फर पाउडर अर्थात गंधक का चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर बुरकाव कर के भी की जा सकती है।

मृदु रोमिल आसिता : यह रोग कोलीटोट्राइम लेजिनेरियम नामक फफूँद से फैलता है। इस रोग के प्रकोप से कद्दूवर्गीय सब्जियों की पत्तियों के नीचे की सतह पर फफूँद सी जमी प्रतीत होती है तथा ऊपरी सतह पर पीले–पीले धब्बे बन जाते है। इस रोग से खीरा, तोरई तथा खरबूजे में अधिक हानि होती है। इस रोग की रोकथाम हेतु अधिक रोगी बेलों को काट कर डायथेन जेड –78 या मेंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 10 दिन के अंतराल से छिड़काव करना चाहिए तथा ब्लाईटॉक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी

की दर से छिड़काव करके भी रोग की रोकथाम की जा सकती है। जहाँ संभव हो रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करना चाहिए।

एन्थ्रेक्नोज या झुलसा रोग : इस रोग से विशेष तोर पर खरबूजा, लौकी व खीरा में अधिक हानि होती है। यह रोग पर्णशिराओं पर धब्बे के रूप में दिखाई देता है जो बाद में बढ़कर 1.0 सेंटीमीटर व्यास के हो जाते है। इनका रंग भूरा तथा आकार कोणीय होता है। धब्बों के आपस में मिलने से कारण सुख जाती है। अनुकूल वातावरण में यह धब्बे बढ़कर पौधों के अन्य भागों व फलों पर भी पाए जाते है। यह रोग मुख्य रूप से मृदोढ़ है, परन्तु बीज से भी फैलता है। इस के रोकथाम हेतु बीजों को पारायुक्त रसायन जैसे थीरम 2.0 ग्राम या एग्रोसान जीएन 2–2.5 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करके बोना चाहिए। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 7 के अंतराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

फल विगलन रोग : यह रोग तोरई, लौकी, करेला, परवल व खीरा में पाया जाता है। प्रभावित फलों पर गहरे धब्बे बन जाते है। ऐसे फल जो मृदा के सम्पर्क में आते हे उन्हें रोग लगने की ज्यादा सम्भावना रहती हैं। भंडारण के समय यदि कोई रोग ग्रस्त फल पहुंचा गया हो तो वह स्वस्थ्य फलों को नुकसान पहुँचता हैं। यह सभी फफूंद मृदाजनित रोग हैं। यदि फल जमीन के सम्पर्क में न आयें तो फल कम रोग ग्रस्त होता हैं। इसके लिए भूमि पर बेलों एवं फलों के निचे पुआल व सरकंडे बिछा देने चाहिए। हेक्साकोनाजोल 5% एस0सी0 2 मि0ली0 पानी मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

मोजेक रोग : मोजेक रोग के लक्षण पौधों के सभी बाहरी भागो पर पाए जाते हैं। पत्तियों पर हरे व पीले धब्बे बनते हैं। रोगग्रस्त पत्तियाँ विकृत, झुर्रीदार, छोटी व कभी– कभी निचे की तरफ मुड़ी हुई होती हैं। इनकी शिराओं का हरा या पीला पड़ना इसका सामान्य लक्षण हैं। रोग का असर फलों पर भी पड़ता हैं जो चितकबरे व विकृत होते हैं। कभी– कभी उनका रंग सफेद हो जाता हैं व टेड़े– मेढे हो जाते हैं। खेत में रोग प्रसार सफेद मक्खी तथा माहु से फैलता हैं। इसकी रोकथाम के लिए रोगग्रस्त पौधों को तुरंत नष्ट कर देना चाहिए। रोग का प्रसार रोकने के लिए डाइमेथोएट 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव 15 दिन के अंतर पर अथवा इमिडाक्लोप्रिड 3–4 मिली. 15 लीटर पानी के घोल के सप्ताह में दो बार छिड़काव से रोग के प्रसार को रोका जा सकता हैं।

जड़ ग्रन्थि रोग : यह रोग मेलाइडोगाइन जवनिका, मेलाइडोगाइन कन्कग्रिटा और मेलाइडोगाइन आरिनेरिया सूत्रकृमि से होता हैं। लगातार एक ही खेत में कद्दूवर्गीय सब्जियों को लेते रहने से इनका विस्तार अधिक होता हैं। इससे पौधों की पत्तियाँ पीली पड़कर झुलसने लगती हैं, तने का रंग पीला पड़ने लगता हैं। जड़ो पर छोटी– छोटी गांठे पड़ जाती हैं जिससे अध्कि प्रभावित होने पर गाठें तनो पर भी दिखाई पडने लगती हैं। फसल की पैदावार पर बहुत प्रभाव पड़ता हैं। रोकथाम के लिए उचित फसल चक्र अपनाकर सूत्रकृमियों को नष्ट किया जा सकता हैं फसल रोपाई करने वाले खेत में 1.5 किलोग्राम कार्बोफ्यूरान सक्रीय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में डालकर बुवाई करनी चाहिए। ग्रीष्म ऋतू में खेत की मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर उसे सूर्य का ताप लगाने के लिए छोड़ देना चाहिए इससे सूत्रकृमि के अण्डे, लार्वा, मादा आदि नष्ट हो जाएंगे जिससे इनका प्रकोप कम हो जाएगा। सूत्रकृमियों की रोकथाम हेतु भूमि की बुवाई करने से पूर्व अच्छी पकी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट 150–200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए सब्जी की पौध तैयार करने के लिए नर्सरी में बुवाई पूर्व नेमागॉन या कार्बोफ्यूरान 12 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से नीचे कतारों में डाल देना चाहिए ताकि आरंभ में जड़ ग्रंथि रोग को पनपने से रोका जा सके।

मधुमेह रोगियों के लिये मिलेट आहार एक वरदान

रितेश सिंह गंगवार* एवं अभय दीप गौतम**

मिलेट में दो तरह के अनाज होते हैं– एक मोटा अनाज और दूसरा छोटे दाने का अनाज। दानों के आकार के आधार पर मिलेट को दो भागो में बांटा गया है, पहला मोटा अनाज जिसमे ज्वार एवं बाजरा आते हैं। दूसरा लघु अनाज जिसमे बहुत छोटे दाने वाले मोटे अनाज जैसे रागी, कंगनी, कोदो, सांवा व कुटकी आदि आते हैं। अनाज को तीन श्रेणी में रखा गया है–

नकारात्मक अनाज

वह अनाज जिसमें कोई चिकित्सीय गुण नही होते हैं, ऐसे अनाजों का लम्बे समय तक लगातार सेवन करते रहने से भविष्य में कई तरह की बीमारियों की सम्भावना रहती है। यह नकारात्मक अनाज होते हैं गेहू व चावल।

तटस्थ अनाज

वह अनाज जिनका सेवन करने से मानव शरीर में होने वाले रोगों या हो चुके रोगों को ठीक करने की शक्ति तो नही होती लेकिन ऐसे अनाज को खाने से शरीर पर उसका कोई बुरा प्रभाव भी नहीं पड़ता। यह अनाज ग्लूटेन मुक्त होते है और इन्हें मोटा अनाज भी कहते हैं। यह मोटे अनाज हैं– बाजरा, रागी, ज्वार व चेना।

सकारात्मक अनाज

वह अनाज जिनका सेवन करने से मानव शरीर में होने वाले रोगों या हो चुके रोगों को ठीक करने की शक्ति होती है या ऐसा अनाज जिसमें चिकित्सीय गुण मौजूद हो वह सकारात्मक अनाज होता है। इनके अरन्तगत बहुत छोटे दाने वाले अनाज आते हैं जैसे कंगनी, कुटकी, कोदो, सांवा आदि द्य भारत के मिलेट मैन डॉ. खादर वली ने इन अनाजों को सिरी धान्य नाम दिया हैं।

तटस्थ अनाज और सकारात्मक अनाज को संयुक्त रूप से मिलेट कहा जाता है।

मधुमेह रोग में मिलेट का सेवन

मिलेट, टाइप–। और टाइप–2 मधुमेह रोग से बचाने में सहायक होते हैं। नियमित आहार में मौजूद फाइबर के द्वारा निर्धारण होता है कि ग्लूकोज का उत्पादन कम या अधिक मात्रा में होगा। आजकल जो अनाज खाया जाता हैं वह कम मात्रा मे फाइबर वाला नकारात्मक अनाज है। इसलिये फाइबर युक्त भोजन करना चाहिये। मिलेट यानी सकारात्मक अनाज फाइबर युक्त होते हैं और यह मधुमेह रोग का इलाज और इस रोग से बचाने में सहायक साबित होता हैं। मधुमेह रोग के उत्तम आहार के लिये तीन चीजों की जानकारी होना अति आवश्यक हैं। पहली ग्लाइसेमिक इंडेक्स, दूसरी ग्लाइसेमिक लोड और तीसरी कार्बोहाइड्रेट की मात्रा।

ग्लाइसेमिक इंडेक्स क्या है ?

ग्लाइसेमिक इंडेक्स वह माप है जिससे पता चलता है कि खाया गया भोजन कितनी देर में पाचन के बाद ग्लूकोज में बदलता है और ब्लड में ग्लूकोज का स्तर बढ़ता है। इसे हम एक तरह से ग्लूकोज के रक्त में बढ़ने की स्पीड कह सकते हैं। ग्लूकोज लेने के बाद जिस स्पीड से ब्लड में शुगर का स्तर बढ़ता है उसे स्टैण्डर्ड मानकर दूसरी खाने वाली चीजों की इंडेक्सिंग 0–100 तक की गयी है।

ग्लूकोज का ग्लाइसेमिक इंडेक्स 100 है। यह एक फिक्स्ड वैल्यू है, भोजन की मात्रा बदलने से ग्लाइसेमिक इंडेक्स नहीं बदलता। ग्लाइसेमिक इंडेक्स की वैल्यू भोजन में मौजूद कार्बोहाइड्रेट की मात्रा पर निर्भर होती है। जिन कार्बोहाइड्रेट में फाइबर की मात्रा कम होती है उनका ग्लाइसेमिक इंडेक्स ज्यादा होता है यही कारण है कि जूस का ग्लाइसेमिक इंडेक्स ज्यादा होता है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, चन्दौली आ.नरूदे.कृषि.एवं प्रौ.वि.वि.कुमारगंज, अयोध्या

अनाज	ग्लाइसेमिक इन्डेक्स स्कोर	ग्लाइसेमिक लोड	कार्बोहाइड्रेट की मात्रा (प्रति 100 ग्राम अनाज में कितने ग्राम)
बाजरा	54	40.10	64.5
रागी	104	44	66.8
ज्वार	70	43	67.7
कुटकी	52	26.80	65.5
कोदो	58–67	27	66.2
कंगनी	60	32–35	60.0
सांवा	50	34	65.5
चेना	50–64	35	78.4

सेहत की दृष्टि से कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाले भोजन ज्यादा अच्छे माने जाते हैं क्योंकि उन्हें खाने से ब्लड में शुगर धीरे–धीरे बढ़ता है। ग्लाइसेमिक इंडेक्स के आधार पर भोजन को तीन वर्गों में बांटा गया है।

कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाला भोजन– 0–55

मध्यम ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाला भोजन– 56–69

उच्च ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाला भोजन – 70 और उससे ऊपर

ग्लाइसेमिक लोड क्या है?

ग्लाइसेमिक लोड हमें बताता है कि ब्लड में शुगर का लेवल कितना बढ़ने वाला है। किसी भी खाने की चीज का ग्लाइसेमिक लोड निकालने के लिये उसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स और उस भोजन में मौजूद कार्बोहाइड्रेट की मात्रा की जानकारी जरूरी है। यह टाईप–2 मधुमेह के रोगियो के रक्त शर्करा के स्तर को संतुलित करने के लिये आवश्यक इंसुलिन की मात्रा को कम करने में सक्षम है, कम ग्लाइसेमिक लोड आहार मधुमेह की दवा की मात्रा को कम करता है। ग्लाइसेमिक लोड मात्रा पर निर्भर करता है।

ग्लाइसेमिक लोड 1 ग्राम शुगर

- 100 ग्राम स्टैण्डर्ड मात्रा मानकर ग्लाइसेमिक लोड निकालते हैं।
- ग्लाइसकेमिक लोड ग्लाइसेमिक इंडेक्स गुणा टोटल कार्बोहाइड्रेट / 100 उदाहरण के लिये
- कंगनी मिलेट (100 ग्राम) 60 गुणा 60 / 100 36
- 100 ग्राम कंगनी मिलेट का ग्लाइसेमिक लोड 36
- 50 ग्राम कंगनी मिलेट का ग्लाइसेमिक लोड निकालना हो तो कार्बोहाइड्रेट की मात्रा आधी करनी होगी।
- 50 ग्राम कंगनी मिलेट का ग्लाइसेमिक लोड 60 गुणा 30 / 100 / 18
- ग्लाइसेमिक लोड को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है
- कम ग्लाइसेमिक लोड वाला आहार 0–10
- मध्यम ग्लाइसेमिक लोड वाला आहार 14–19
- ज्यादा ग्लाइसेमिक लोड वाला आहार 20 और उससे ज्यादा

स्वस्थ व्यक्ति को एक दिन में अपने भोजन का ग्लाइसेमिक 100 से कम रखना चाहिए जबकि डायबिटिक पेशेंट को पूरे दिन में उनके भोजन का ग्लाइसेमिक लोड 50 से कम रखना चाहिए।

किसान भाइयों,

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के प्रश्चात संस्तुति मात्रा में सुंतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

एकीकृत फसल प्रणाली में मत्स्य सह : बत्तख पालन करें

ए.के. सिंह* एवं आर.आर. सिंह**

पूर्वांचल में जनसंख्या का घनत्व अधिक होने व कृषि जोत छोटी होने की वजह से अधिकांश किसान लघु व सिमान्त श्रेणी में आते हैं, यहां के लोग रोजगार की तलाश के लिए बड़े शहरों की तरफ रुख कर रहे हैं ऐसी स्थिति में ग्रामीण अंचल में स्वरोजगार उपलब्ध कराने के लिए मछली के साथ बत्तख पालन एक अत्यंत लाभकारी व्यवसाय है। क्योंकि इस व्यवसाय में कम पूंजी से ही मछली एवं बत्तख दोनों ही से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस व्यवसाय को शुरु करने के लिये कम लागत से ही गांवों में बेकार पड़े हुए तालाबों की सफाई आदि कर मछली के साथ बत्तख पालन का व्यवसाय शुरू किया जा सकता है। इससे गांवों में ही रोजगार उपलब्ध हो सकेगा।

मुर्गी की जगह बत्तख पालन ही क्यों :– मुर्गियों की जगह बत्तख पालन में जोखिम कम रहता है, इसमें बीमारियां भी कम लगती है। बत्तख अपने भोजन का अधिकांश भाग घूम कर खेतों बाग – बगीचों में दाने, हरे पत्ते, कीट पतंगों इत्यादि एवं तालाब के कीड़ों से प्राप्त कर लेते हैं, जिससे उनके खाने पर व्यय कम आता है। बत्तखें मुर्गियों की तुलना में 40 से 50 प्रतिशत ज्यादा अंडे देती है। बत्तखों के अंडे मुर्गियों के अंडे की तुलना में 15 से 20 ग्राम अधिक वजन के होते हैं। बत्तखों की देखरेख में अधिक ध्यान देने की जरूरत नहीं होती है। मछली एवं बत्तख के मांस में प्रोटीन की अधिकता होती है। भोजन में इसके सेवन से ग्रामीणों खासकर महिलाओं एवं बच्चों में कुपोषण पर रोक लगेगी एवं परिवार की आर्थिक स्थिति में भी सुधार होगा।

मछली के साथ बत्तख पालन से लाभ :–

- मछली पालन में आहार तथा उर्वरक पर होने वाले व्यय को इस तकनीकी से 60 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है, साथ ही बत्तख भी इससे 30–40 प्रतिशत तक भोजन की पूर्ति तलाब से कर लेती है। बत्तख एवं मछली दोनों का ही जल से प्राकृतिक लगाव होने के कारण इसका एक साथ पालना सुविधाजनक होता है तथा विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में इसके अपनायें जानें की प्रबल संभावनायें दिखाई देती है।
- बत्तखों के मल–मूत्र में 25 प्रतिशत जैविक प्रदार्थ तथा 20 प्रतिशत अजैविक पदार्थ पायें जाते हैं जिसमें कार्बन, फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, पोटैशियम और कैल्शियम आदि तत्व भी शामिल होते हैं। यह तत्व तालाब के लिए उर्वरक का काम करते हैं जिससे तालाब में मछलियों का प्राकृतिक भोजन (प्लवकों) का प्रचुर मात्रा में उत्पादन होता है फलस्वरूप तालाब में पूरक आहार और उर्वरक दिये जाने की आवश्यकता नहीं होती है।
- बत्तख तालाब में जलीय कीट एवं डिम्भक, टैडपोल, मौलस्क, वाटरबग, लार्वा तथा खरपतवार खाती रहती है जो मछलियों को नुकसान पहुंचाते हैं और तालाब की उत्पादकता को कम कर देते हैं। इस प्रकार बत्तख पालन से तालाब की सफाई बिना किसी व्यय के होती रहती है। बत्तख से मांस एवं अंडे प्राप्त होते हैं, अतः मछली के साथ बत्तख पालन से अतिरिक्त आय होती है।
- बत्तख तालाब की तलहटी से मिट्टी को भोजन की तलाश में उलटते–पलटते रहते हैं, जिससे लाभकारी खनिज तत्व तालाब में उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे तालाब की उत्पादकता बढ़ जाती है। बत्तखों के दिनभर तालाब में तैरने से तलाब के जल में घुलित आंक्सीजन की मात्रा भी बढ़ जाती है।

मछली पालन के लिए तालाब की तैयारी :– मछली के साथ बत्तख पालन के लिए सर्वप्रथम मई. जून के महीनों में तालाब को सुखा लिया जाता है, इसके बाद तली पर जमें कीचड़ को तथा अवांछनीय खरपतवार एवं मछलियों को तलाब से निकालकर

**अपर निदेशक प्रसार, आ.न.दे.कृषि एंव प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोद्धया, *वैज्ञानिक कृषि विज्ञान केन्द्र, ऑकुशपुर, गाजीपुर।

बंन्धों या पास के खेतों में डाल दिया जाता है जो मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है। इसके पश्चात मृदा एवं जल की अम्लीयता को सुधारने के लिए पी.एच. मान को संतुलित बनाए रखने के लिए 200 से 500 कि.ग्रा./हे. की दर से चूने का प्रयोग आवश्यक है, इसके बाद तालाब में एक से डेढ़ मीटर तक पानी भरकर लगभग 15 दिनों तक छोड़ दिया जाता है।**मत्स्य प्रजातियों का चुनाव एवं संचय** :– संग्रहित मत्स्य पालन की 4 प्रजातीय मिश्रण जिसमें कतला, रोहू, नैन तथा कामन कार्प जीनके कि बच्चों का आकार 10 से 12 से.मी. का होना चाहिए का चयन मत्स्य संघ बत्तख पालन के लिए किया जाता है। इन चार प्रजातियों की 5000 से 6000 की संख्या प्रति हेक्टेयर की दर से क्रमशः 2 : 2 : 1 : 1 के अनुपात में संचय करते हैं। बीज संचय करने से पूर्व तालाब में नायलान का जाल चलाकर अवांछनीय जलीय कीटों को साफ कर लेते हैं तथा तालाब में पानी का स्तर 1 से 1.5 मी. तक रखते है।

बत्तख सह मत्स्य पालन पद्धति में मछलियों को किसी प्रकार का परिपूरक आहार नहीं दिया जाता है। बत्तखों के मल.–मूत्र को प्रचुर मात्रा में मछलियां सीधे आहार के रूप में ग्रहण करती हैं, इस प्रकार की पद्धति में किसी प्रकार के अतिरिक्त उर्वरक एंव आहार की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि 200 से 300 बत्तखों को प्रति हेक्टेयर की दर से संचित रखने से तालाब में एक साल में लगभग 10,000 से 12,000 किलोग्राम तक अवशिष्ठ उपलब्ध हो जाता है। मछलियों के स्वास्थ्य एवं वृद्धि का आकलन तालाब में समय–समय पर जाल चलाकर करते रहना चाहिए।

मछली बत्तख पालन से आय :– बत्तख और मछली पालन अलग–.अलग करके इतना लाभ अर्जित नहीं हो पाता है जितना कि लाभ मछली के साथ बत्तख पालन से होता है। क्योंकि एक वर्ष में 200 से 300 बत्तख प्रति हेक्टेयर जल क्षेत्र में रखने से प्रतिवर्ष 17000 से 18000 अंडे, 500 से 700 किलोग्राम मांस तथा 4000 से 5000 किलोग्राम मछली प्राप्त की जा सकती है। बत्तख का कृत्रिम भोजन एक भाग मुर्गी का दाना और दो भाग चावल का मिश्रण होता है, जिसकी खपत 100 से 120 ग्राम ग्राम प्रति पक्षी प्रतिदिन होती है। बत्तख का मल–मूत्र कार्बनिक उर्वरक का काम करता है, जो 125 से 150 ग्राम प्रति पक्षी प्रतिदिन की दर से वर्षभर में 100 से 150 कुंतल तक होता है। बत्तख के साथ मछली पालन में देसी और विदेशी प्रजातियों की 5000 से 6000 अंगुलिकायें प्रति हेक्टेयर संचित की जाती है। जिनमें इसके अतिरिक्त कुछ समय तक बत्तख और मछली के बीच दूरी तब तक दूरी रखी जाती है जब तक कि अंगुलिकाओं का आकार 10 से 12 से.मी. का न हो जाय। इससे बत्तख अंगुलिकाओं को हानि नही पहुंचा सकेगे। दो वर्ष बाद बत्तखों की अंडा देने की क्षमता कम हो जाने के कारण उन्हें बाजार में बेच दिया जाता है।

बत्तख की नस्लों का चुनाव :– बत्तख पालन अंडा एवं मांस उत्पादन दोनो के उद्देश्य से किया जाता है जो निम्न प्रकार है। **अंडा देने वाली नस्लें** :– अंडा उत्पादन के लिए मुख्य रुप से खाकी कैंम्पबेल तथा इंडियन रनर है। खाकी कैम्पबेल लगभग 300–400 तथा इंडियन रनर लगभग 280–300 अण्डे प्रतिवर्ष देती है एवं एक अंडे का भार लगभग 70 ग्राम के आस पास होता है।

मांस हेतु नस्लें :– मांस उत्पादन के लिए मुख्य नस्लें खाकी कैम्पबेल, मस्कावी, सफेद पेकिंग, एलिसवरी एवं नागेश्वरी आदि है जिनसे अच्छा मांस प्राप्त होता है। व्यस्क नर लगभग 2.2 से 2.5 किलोग्राम एवं मादा बत्तख 2.0 की होती है। इस प्रकार किसान अपनी पसंद एवं उपलब्धता के आधार पर बत्तख की प्रजातियों का चुनाव कर सकते हैं। तीन से चार महीने की बत्तखें तालाब में पालने के लिए उपयुक्त होती है और इसी अवस्था में अंडा देना प्रारम्भ कर देती है।

बत्तखों का आवास :– बत्तख दिन के समय तालाब या आसपास के खेतों में पानी की सतह में रहकर तैरती रहती है लेकिन रात का समय व्यतीत करने के लिए एक साधारण घर की आवश्यकता होती है। बत्तखघर का क्षेत्रफल बत्तखों की संख्या के अनुसार

होना चाहिये। प्रत्येक बत्तख के लिए 0.3 से 0.5 वर्ग मीटर स्थान उपलब्ध होना चाहियें। बत्तख घर का लगभग दो तिहाई भाग पानी के ऊपर तथा एक तिहाई भाग बंधे के ऊपर टिका रहे, इसके अतिरिक्त बत्तख घर तालाब के मध्य में भी बनाया जा सकता है। बत्तखों को अपने घर में आने .जाने के लिए रास्ता होना चाहिए जिससे कि वह आसानी से तालाब में व वापस अपने आवास में चले जाएं। घर की छत घास या टीन से बनाई जा सकती है तथा फर्श बांस की पट्टियों से बनाई जा सकती है, प्रत्येक पट्टियों के बीच 1.0 सें.मी. जगह छोड़ दी जाती है, जिसके द्वारा गिराया गया दाना एवं अपशिष्ठ पदार्थ सीधे तालाब में चला जाएं। बंधे पर बना हुआ बत्तख घर के फर्श की ढालान तालाब की ओर होना चाहिए ताकि सफाई के समय अवशिष्ट पदार्थ सीधे तालाब में जाकर गिरे। बत्तख घर को रोजाना चूने आदि का प्रयोग करके सफाई करना चाहिएं।

बत्तखों के लिए आहार :– बत्तखों की समुचित वृद्धि तथा अंडा उत्पादन के लिए संतुलित आहार देना अति आवश्यक होता है। बत्तखों की वृद्धि के लिए प्रथम तीन सप्ताह अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं इसलिए आहार में प्राप्त मात्रा में प्रोटीन होनी चाहिए। बत्तखों के चूजों की उचित वृद्धि के लिए स्टार्टर राशन दिया जाता है। जीसमें लगभग 17–20 प्रतिशत प्रोटीन होनी चाहिए जबकि लेयर राशन में 15–18 प्रतिशत प्रोटीन होती है, इसके अतिरिक्त बत्तखों को पीने के लिए बर्तन में प्रर्याप्त मात्रा में पानी आवश्य रखना चाहिए क्योंकि बत्तख बिना पानी के भोजन नहीं खा पाती है। बत्तख 4 से 6 माह में अंडे देना प्रारंभ कर देती है, अंडों का नुकसान ना हो सके इसके लिए उसके आवास में घास फूस का जगह.–जगह बिछावन (घोसला) बना देना चाहिए।

सावधानियां :–

- तलाब को प्रतिवर्ष कम से कम 7 दिन तक गर्मियों की धूप में सुखाना चाहिए।
- मत्स्य बीज संचय करने से 15 दिन पहले चूना छिड़कें।
- तालाब की तली में अधिक कीचड़ एकत्र ना होने दें।
- संचय के समय मत्स्य बीज का आकार कम से कम 10–12 सेंटीमीटर होना चाहिए अन्यथा 10 सेंटीमीटर से छोटे मत्स्य बीज को बत्तख अपना भोजन बना सकती हैं।
- बत्तख घर में प्रकाश, शुद्ध हवा एवं सफाई की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- मछलियों व बत्तखों में संक्रमण की अवस्था में शीघ्र ही संम्बंधित विशेषज्ञों से सलाह लेनी चाहिए।
- बीमार मछलियोंव बत्तखोंको तुरंत अलग कर देना चाहिए।
- बत्तखों के लिए भोजन व पानी के बर्तनों की नियमित सफाई होती रहनी चाहिए।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

नवजात बछड़ों में होने वाले संक्रामक रोग एवं प्रबन्धन

डी०डी० सिंह*, बी०पी० शाही** एवं आर० आर० सिंह***

नवजात बछड़ों में संक्रमण रोधक क्षमता कम होती है। अतः उचित देखभाल के अभाव में रोग ग्रस्त होने की संम्भावना बनी रहती है।

1.नाभि शोथ (नेवेल इल):– नाभि और उससे सम्बन्धित संरचनाओं का संक्रमण आम तौर पर नवजात बछड़ों में होता है। यह संक्रमण मुख्यतः नाभि सूत्र के ठीक से न कटने तथा ठीक से देखभाल न होने पर होता है। इसमें मुख्यतः इ0 कोलाई, स्टैफाइलोकोस, स्ट्रेप्टोकोकस, कोरिनीबैक्टीरियम का संक्रमण होता है। इसके उपचार के लिए नाभि पर टिंक्चर आयोडिन का घोल नियमित रूप से लगाया जाना चाहिए।

2.फुफ्फुस शोथ (न्यूमोनिया):– यह जीवाणु व माइकोप्लाजमा जनित संक्रामक रोग है। रोग ग्रस्त जानवर द्वारा दूशित/संक्रमित पानी/दाना/चारा व वायु से यह स्वस्थ पशुओं में फैलती है। इस बीमारी में जानवर को तेज बुखार के साथ ऑख और नाक से पानी बहता है, सॉस लेने में कठिनाई होती है इसके उपचार के लिए रोगग्रस्त पशु को तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग करके उचित एन्टीबायोटिकस आवश्यकता अनुसार देनी चाहिए।

3.आंत्र विषाक्कता (इन्टेरोटोक्सिमिया):– यह रोग मुख्य रूप से क्लोस्ट्रीडियम परफ्रिन्जनस टाइप डी नामक अवायुवीय जीवाणु से होता है, व यह रोग प्रायः अधिक स्वस्थ युवाओं में अधिक होता है। इस बीमारी से ग्रसित नवजात के पेट में तीव्र दर्द उठता है, रोग ग्रसित नवजात दर्द के कारण जमीन पर छटपटाकर गिर जाते है यदि समय से उपचार न किया गया तो मृत्यु हो जाती है। इसके उपचार के लिए 8–10 ग्राम तक खाने का सोडा तथा टेट्रासाइक्लिन पाउडर का घोल दिन में 2–3 बार पिलाना चाहिए, इस रोग के बचाव के लिए 3–4 महीने की उम्र पर टीका लगवाना चाहिए।

4.कुकडिया (काक्सीडियोसिस):– यह रोग आइमेरिया नामक प्रोटोजोआ परजीवी से होता है। यह रोग संक्रमित चारा, दाना, पानी के साथ स्वस्थ्य नवजात की आँतों में पहुँच जाता है, इस प्रक्रिया में ऑतों की कोशिकाओं के फटने के कारण खून आता है तथा पतले दस्त हो जाते है। इस रोग के कारण नवजात की शारीरिक वृद्धि रूक जाती है व कमजोर हो जाते है जिससे मृत्यु दर बढ़ जाती है। इसके उपचार के लिए सल्फाडायमिडीन, एमप्रोलियम देना चाहिए।

5.अतिसार (कोलीबैसिलोसिस):– नवजात पशुओं में 4–5 दिन बाद दस्त की सम्भावना हो जाती है। यह रोग ई0 कोलाई द्वारा होता है। इसमें पीले या सफेद रंग के दस्त होते है। इसके प्रभाव से नवजात में लड़खड़ाहट और शरीर में पानी की कमी हो जाती है इसके उपचार के लिए एन्टीबायोटिक, इलैक्ट्रोलाइट तथा रिंगरलैक्टेट नस में आवश्यकतानुसार देते है

6. आँखों का संक्रमण:– इसमें ऑखे लाल हो व सूज जाती है, ऑखों से स्त्राव बढ़ जाता है, कभी–कभी ऑखों की पुतली सफेद (कोर्नियल ओपेसिटी) हो जाती है। सामान्यता यह रोग स्वतः समाप्त हो जाता है। लेकिन चिकित्सक की सलाह से टेट्रासाइक्लिन, क्लोरमफेनीकोल, सिपरोफ्लोक्सासिन नामक दवा ऑखों में डालनी चाहिए।

7.टिटनेस:– नाभि में टिटनेस के जीवाणु के संक्रमण होने से टिटनेस रोग की सम्भावना बढ़ जाती है। इस रोग में शरीर की सभी मॉस पेशियां अकड जाती है, जिससे हाथ, पैर, पूँछ, कान सभी अकड जाते है तथा जल्दी ही मृत्यु हो जाती है। इस रोग का सफल उपचार नही हो पाता है, इसके बचाव के लिए पैदा होने के बाद नाभि पर टिन्चर आयोडिन का घोल नियमित रूप से लगाना चाहिए।

8.जोडों का दर्द/सूजन:– इस रोग में जोडों में

*'एसोसिएट प्रोफेसर (पशु रोग विज्ञान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अद्यक्ष, के०वी०के० मसौधा, ***प्रसार निर्देशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

सूजन आ जाती है। जिसके फलस्वरूप चलने फिरने में दर्द महसूस होता है। इसके उपचार के लिए टेक्ट्रासाइक्लिन, प्रेडिनीसौलोन का इंक्जैक्शन देते है।

नवजात बछड़ों में रोग से बचाव के लिए महत्बपूर्ण प्रबन्धन

1.नवजात के पैदा होने के बाद साफ करके तुरन्त खीस (कोलस्ट्रम) पिलाएं, जेर गिरने का इन्तजार न करें।

2.नवजात को खनिज लवण चाटने के लिए अवश्य दें।

3.प्रतिदिन बाडों की नियमित रूप से सफाई करें

4.बाडों के अन्दर व बाहर बुझे चूने का छिड़काव करें।

5.बीमार नवजात को स्वस्थ जानवरों से अलग रखकर उचित उपचार व देखभाल करनी चाहिए।

6.नवजात को अन्य जानवरों से अलग रखें ताकि उनसे संक्रमित दाना/पानी न खा सकें और नवजात को कोक्सीडियोसिस नामक घातक बीमारी से बचाया जा सके।

बछड़ों की देखभाल और प्रबन्धन

बछड़ों के अच्छे विकास के लिए अच्छा प्रबन्ध बहुत जरूरी है, जो कि परिवर्तित वंश (रिप्लेशमन्ट स्टॉक) के लिए लाभदायक है। बछड़ों का खान–पान, देखभाल मॉ के गर्भ से ही शुरू हो जाता है।

निम्नलिखित प्रबन्धन की चीजें ध्यान में रखनी चाहिए–

- जन्म के तुरन्त बाद श्लेष्मा को नाक और मुंह से साफ कर देना चाहिए।
- प्रायः गाय जन्म के तुरन्त बाद बछड़े को चाटती है, यह बछड़े को सूखने और सांस लेने और परिसंचरण को शुरू करने में सहायता करती है। जब गाय बछड़े को न चाटे या ठंडी के मौसम में बछड़े को सूखे कपड़े या बोरे से रगडें और सुखायें।
- हाथ से वक्ष को दबाकर और ढीला छोड़कर के कृत्रिम श्वांस प्रदान करें।
- नाल को शरीर से 2–5 सेमी की दूरी पर बांधना चाहिए और जहॉ पर बांध रखा है वहॉ से 1 सेमी की दूरी पर काट दें और आयोडिन की आभा (टिंक्चर आयोडिन) या बोरिक अम्ल या कोई प्रतिजैविक (एण्टीबायोटिक) को लगायें।
- जानवरों के बाड़े से बिस्तर आदि हटा दें और बाड़े को साफ और सूखा रखें।
- बछड़े का भार लें।
- गाय के थन और चुचूक को मुख्यतः क्लोरीन के घोल से धुले और सूखा रखें।
- बछड़े को गाय के पहले दूध (खीस)/कोलोस्ट्रम को पिलायें।
- बछड़ा एक घंटे के अन्दर खडा होने लगेगा और दूध पीने का प्रयास करेगा, अन्यथा कमजोर बछड़ों को दूध पीने मे सहायता करनी चाहिए।
- पहले 3 दिनों तक बछड़ों को गाय का पहला दूध यानि खीस पिलायें।
- खीस मोटा और गाढा होता है। इसमें अधिक मात्रा में प्रोटीन और विटामिन होती है। इम्यूनोग्लोबिन प्रोटीन जो बहुत सारी बीमारियों से सुरक्षा प्रदान करती है। खीस ट्रिप्सिन विरोधी पदार्थ रखती है, जो कि इम्यूनोग्लोबिन को पेट में पचने से रोकती है और वह जैसे को तैसा अवशोषित हो जाती है। पूर्ण दूध 3 दिन के बाद देना चाहिए। बछड़े को बाल्टी और नाद से दूध पीना सिखाना अधिक अच्छा होता है। शरीर के बराबर ताप के गर्म दूध को दिन मे दो बार पिलाएं।
- दूध पिलाने की सीमा शरीर के भार का 10 प्रतिशत के अनुसार होनी चाहिए जो कि अधिकतम 5–6 लीटर प्रतिदिन और तरल दूध 6–10 सप्ताह तक लगातार पिलाना जारी रखना चाहिए। अधिक पिलाना ''बछड़ों की दस्त'' (बछड़ों की स्काउट) बीमारी का कारण बन सकता है। पूर्ण दूध के आहार को परिवर्तित करने के लिए ''दूध परिवर्तक'' (मिल्क रिप्लेसर) दिया जा सकता है।
- बछड़ों को 'शुरूआती पौधा आहार'' (काफ स्टार्टर) एक महीने के बाद देना चाहिए।
- चार महीने के बाद सूखी घास और उत्तम गुणों का हरा चारा देना चाहिए।
- एण्टीवायोटिक (प्रतिजैविक) खिलाने से बछड़ों की

समय	खीस (मि.ली.)	दूध (मि.ली.)	वसा रहित दूध (मि.ली.)	कॉफ स्टार्टर' (ग्राम)	हे (ग्राम)
1–3 दिन	2550	...	...	...	...
4–7 दिन	...	2550	...	...	...
1–4 सप्ताह	...	3000	...	200	900
5–9 सप्ताह	...	...	2500	500	750
10–12 सप्ताह	...	...	...	1200	1600

भूख बढ़ जाती है। विकास दर (वृद्वि दर) बढ़ जाती है और ''बछड़ों की दस्त'' बीमारी से बचाता है। जैसे– ऑरोमाइसिन, टेरामाइसिन

- जन्म के समय बछड़ों की पहचान कान में टैटू (गोदना) बनाकर करें और एक साल बाद टैगिंग करें।
- जन्म के 6–10 दिन बाद बछड़ों की सींग को लाल गर्म लोहे या धावन सोडा (कास्टिक पोटाश) की छड़ी या बिजली द्वारा खत्म कर दें।
- कृमिनाशक दवाओं का प्रयोग करके कीडों को नष्टकर बछड़ों को लगतार कृमिरहित रखना चाहिए।
- 2–3 सप्ताह के बाद ताजा पानी देना चाहिए।
- तीन महीने तक बछड़ों को अलग बाडें में रखना चाहिए उसके बाद उनको समूह में रखना चाहिए।
- वृद्विदर जानने के लिए बछड़ों को पहले सप्ताह के अन्तराल पर और उसके बाद मासिक अन्तराल पर तौलें।
- बछड़ों में पहले महीने की मृत्यु का कारण न्यूमोनिया (सांस की बीमारी) 'बछड़ों की दस्त' एवं कृमि के कारण होती है। उपर्युक्त दशाओं से बचने के लिए बछड़ों को गर्म और साफ वातावरण में रखना चाहिए।
- 4 से ज्यादा चुचूको को 1–2 महीने की उम्र में ही हटा देना चाहिए।
- 8–9 सप्ताह की उम्र में नर का बधियाकरण कर देना चाहिए।
- कवक के संक्रमण से बचाने के लिए शरीर को साफ और सूखा रखना चाहिए।
- खनिज पदार्थ के टुकडे देने चाहिए जिससे कि बछड़ा उसे चाट सके और खनिज की अपूर्णता को कोई मौंका न बचे।
- बछड़ों को मॉ का दूध छुडाकर नांद प्रणाली से खिलाये।

बछड़ों का आहारः–

बछड़ों के आहार पर ही उनकी वृद्धि एवं उत्पादकता निर्भर करती है। उचित पोशण व्यवस्था से, प्रत्येक ब्यात में अधिक उत्पादन मिलता है तथा दो ब्यावों के बीच का अंतर भी कम हो जाता है। इसके साथ ही स्वस्थ पशु की प्रजनन क्षमता एवं रोग प्रतिरोधक शक्ति अच्छी रहती है और पशु उत्पादों की गुणवत्ता भी उत्तम श्रेणी की होती है। बछड़ों को जन्म के तुरंत बाद से 1 हफ्ते तक खीस पिलानी चाहिए, इसमें पाए जाने वाले विभिन्न तत्वों से उन्हें रोगों से लड़ने की क्षमता प्राप्त होती है। खीस या दुध शारीरिक भार के दसवें भाग के बराबर पिलानी चाहिए। दूसरे सप्ताह में उसे मॉ के दूध के साथ–साथ मक्खन निकला हुआ दूध तथा कॉफ स्टार्टर तथा मुलायम हरी घास भी देनी चाहिए। बारह सप्ताह का होने पर उसे दूध न देकर केवल कॉफ स्टार्टर एवं हरी घास पर भी रखा जा सकता है। तीन माह की आयु तक के बछड़ों का आहार निम्न तरह से प्रदान कर सकते हैं।

'कॉफ स्टार्टर का संघटन

जौ / मक्का–50 भाग

मूॅगफली की खल–25 भाग

गेहूॅ का चोकर–9 भाग

मछली का चूरा–10 भाग

लवण मिश्रण–02 भाग

शीरा–05 भाग

रोविमिक्स –10 ग्राम / क्विंटल

नमक–500 ग्राम / क्विंटल

ऑरों फैक–20 ग्राम / क्विंटल

प्रकृति का अमूल्य औषधीय वरदान : हल्दी

मूदला पाण्डेय*, साधना सिंह** एवं जीनत अमान*

भारत देश आयुर्वेद का देश है जहां औषधीय एवं सुगंधित पौधों का उपयोग काफी वर्षों से होता आ रहा है, इसके व्यापक व्यावसायिक कृषिकरण एवं प्रसंसकरण की तरफ जन सामान्य में जितनी रुचि वर्तमान में जाग्रत हुई है, उतनी संभवतः पहले कभी नहीं हुई थी। वर्तमान समय में जहाँ कृषक परंपरागत फसलों को छोड़कर औषधीय एवं सुगंध पौधों की खेती की ओर आकर्षित होने लगे हैं, वहीं उच्च शिक्षा प्राप्त युवक भी औषधीय एवं सुगंध पौधों की खेती अपनाकर गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं औषधीय एवं सुगंध पौधों की खेती कर किसान आर्थिक रूप से सुदृढ़ हो सकते हैं क्योंकि भारत में इसकी खेती करने के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं। औषधीय पौधों का उपयोग आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में किया जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 80 प्रतिशत जनसंख्या परंपरागत औषधियों से जुड़ी हुई है। परंपरागत खेती की अपेक्षा औषधीय एवं सुगंध पौधों की खेती अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ है, क्योंकि इन फसलों को परंपरागत फसलों की अपेक्षा कम खाद–पानी और कम देखरेख की आवश्यकता पड़ती है। औषधीय एवं सुगंध पौधों पर देश में सबसे प्रभावी शोध भारत सरकार की वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) के अंतर्गत केन्द्रीय औषधीय एवं सुगंध पौधा संस्थान (सीमैप), लखनऊ और इससे सबंधित अनुसंधान केन्द्र सीएसआईआर–सीमैप, अनुसंधान केन्द्र, पंतनगर; सीएसआईआर–सीमैप, अनुसंधान केन्द्र, पुरारा; सीएसआईआर–सीमैप, अनुसंधान केन्द्र, बैंगलोर; और सीएसआईआर. –सीमैप, अनुसंधान केन्द्र, हैदराबाद के अनुसंधान और विकास के द्वारा एवं घरेलू और ग्रामीण विकास कार्यक्रम के तहत जारी प्रयासों के कारण औषधीय एवं सुगंध फसलों की खेती पर ध्यान आकर्षित किया जा रहा है।

औषधीय पौधों का महत्व

दुनिया भर में चिकित्सा प्रणाली मुख्य रूप से दो अलग–अलग धाराओं के माध्यम से काम करती है: (श) स्थानीय या आदिवासी धारा और (२) कोडित और संगठित चिकित्सा प्रणाली जैसे– आयुर्वेद, सिद्ध, यूनानी और अम्ची (तिब्बती औषधि)। औषधीय पौधों को भोजन, औषधि, खुशबू, स्वाद, रंजक और भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में अन्य मदों के रूप में उपयोग किया जाता है। औषधीय पौधों का महत्व उसमें पाए जाने वाले रसायन के कारण होता है। औषधीय पौधों का उपयोग मानसिक रोगों, मिर्गी, पागलपन तथा मन्द–बुद्धि के उपचार में किया जाता है। औषधीय पौधे कफ एवं वात का शमन करने, पीलिया, ऑव, हैजा, फेफड़ा, अण्डकोष, तंत्रिका विकार, दीपन, पाचन, उन्माद, रक्त शोधक, ज्वर नाशक, स्मृति एवं बुद्धि का विकास करने, मधुमेह, मलेरिया एवं बलवर्धक, त्वचा रोगों एवं ज्वर आदि में लाभकारी हैं। प्राचीनतम समय से ही पौधों को प्राकृतिक रूप में,अर्क या चूर्ण के रूप में कूट–पीसकर प्रयोग किया जाता रहा है। लेकिन अब आज के समय में औषधीय पौधों पर खोज करके तथा इनका प्रसंसिकरण कर व्यापक रूप से. प्रयोग किया जाने लगा है।

सुगंध पौधों का महत्व

सुगंध पौधों से प्राप्त होने वाले इसेंशियल ऑइल का उपयोग आधुनिक सुगंध एवं सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में व्यापक रूप में हो रहा है। सुगंध पौधों का तेल मुख्यतः इत्र, साबुन, धुलाई का साबुन, घरेलू शोधित्र, तकनीकी उत्पादों तथा कीटनाशक के रूप में होता है। साथ ही सुगंध तेल का उपयोग चबाने वाले तंबाकू, मादक द्रवों, पेय पदार्थों, सिगरेट तथा अन्य विभिन्न खाद्य उत्पादों के बनाने में भी किया जाता है। सुगंध पौधे, जैसे कि पुदीना के तेल का उपयोग च्यूइंगम, दंतमंजन, कन्फेक्शनरी और भोजन पदार्थों में होता है। खस जैसी सुगंध फसल से सुगन्धित द्रव तथा सुगन्ध स्थिरक व फिक्सेटीव के रूप में प्रयोग होता है।

हल्दी के औषधीय गुण

मसालों के मामले में भारत एक धनी देश है। यहां अलग–अलग व्यंजनों के लिए सामान्य से लेकर खास मसालों का इस्तेमाल किया जाता है। वहीं, इनमें कुछ ऐसे भी मसाले हैं, जिन्हें अपने औषधीय गुणों की वजह से आर्युवेद में विशेष स्थान दिया गया है। हल्दी इन्हीं में से एक है। हल्दी एक प्रमुख भारतीय औषधि है। इसका पौधा 5 से 6 फुट तक बढ़ने वाला होता है, जिसकी जड़ों की गांठों से हल्दी मिलती है। औषधि–ग्रन्थों में इसे हल्दी के अतिरिक्त हरिद्रा,

*पी.एच.डी.शोध छात्रा, **प्रोफेसर एंड हेड आहार एवं पोषण विज्ञान अधिष्ठाता सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

कुरकुमा, लौंगा, वरवर्णिनी, गौरी, क्रिमिघ्ना, योशितप्रिया, हरदल, टर्मरिक आदि नाम दिये गये हैं। भारत वर्ष में हल्दी को न केवल एक प्रमुख मसाले के रूप में प्रयोग किया जाता है, वरन अपने अद्वितीय औषधीय गुणों के कारण एक प्रमुख प्राकृतिक औषधि के रूप में तथा भारतीय धार्मिक एवं सांस्कृतिक अवसरों पर भी इसका प्रयोग किया जाता है। हल्दी का लेटिन नाम –कुरकुमा लौंगा, अंग्रेजी नाम –टरमरिक व पारिवारिक नाम –जिनजीबेरेसी है। इसमें उड़नशील तेल 5.8 प्रतिशत, प्रोटीन 6.3 प्रतिशत, द्रव्य 5. प्रतिशत, खनिज द्रव्य 3.5 प्रतिशत, और कार्बोहाइड्रेट 68.4 प्रतिशत के अतिरिक्त कुर्कमिन नामक पीतरंजक द्रव्य व विटामिन ए पाया जाता है।हल्दी के औषधीय गुण अनेक हैं, जिनमें एंटीइन्फ्लेमेटरी, एंटीऑक्सीडेंट, एंटीट्यूमर, एंटीसेट्रिक, एंटीवायरल, कार्डियोप्रोटेक्टिव (हृदय को स्वस्थ रखने वाला गुण), हेपटोप्रोटेक्टिव (लिवर स्वस्थ रखने वाला गुण) और नेफ्रोप्रोटेक्टिव (किडनी स्वस्थ रखने वाला गुण) गुण मुख्य हैं। हल्दी का उपयोग शरीर के लिए निम्न प्रकार से लाभदायक हो सकता हैः

आक्सीकरणरोधी गुण– हल्दी के इस गुण की खोज सन 975 के प्रारम्भ में ही कर ली गयी थी। यह हीमोग्लोबिन की आक्सीडेशन से रक्षा करती है।

कृमिनाशक गुण– हल्दी को कृमिहरा या कृमिनाशक) एन्टीथेलमिन्टिक (भी कहा जाता है। टरमरिक के जूस में कृमिनाशक गुण होता है। नेपाल के ग्रामीण इलाकों में टरमरिक पाउडर या पेस्ट को पानी में थोड़ा सा नमक डालकर उबालते हैं तथा इस जूस को कृमिनाशक औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

हड्डियों के रोग को ट्रर करने में सहायक – हड्डियों के विभिन्न रोग, गठिया, वात टूर करने में भी हल्दी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। रोजाना हल्दी मिश्रित दूध पीने से शरीर को पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम मिलता है। यह ऑस्टियोपोरोसिस के मरीजों को राहत पहुँचाता है। रियूमेटॉइड गठिया के कारण उत्पन्न सूजन के उपचार में भी हल्दी का प्रयोग किया जाता है।

कैन्सर रोधी गुण– कच्ची हल्दी में कैंसर से लड़ने के गुण होते हैं। यह पुरुषों में होने वाले प्रोस्टेट कैंसर की कैंसर कोशिकाओं को बढ़ने से रोकने के साथ–साथ उन्हें समाप्त भी करती है। हल्दी में उपस्थित तत्व कैंसर कोशिकाओं से डी. एन.ए .को होने वाले नुकसान को रोकते हैं व कीमोथेरेपी के दुष्प्रभावों को भी कम करते हैं।

बैक्टीरिया रोधी, फंगस रोधी व सूक्ष्मजीवी रोधी गुण– अनेक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि टरमरिक अनेक प्रकार के बैक्टीरिया, पैथोजेनिक फंजाई एवं पैरासाइट्स की वृद्धि को रोकती है।

पाचन–सम्बन्धी गुण– भारत में प्राचीन काल से हल्दी का प्रयोग दैनिक जीवन में मसाले के रूप में किया जाता रहा है। यह पाचन शक्ति को बढ़ाता है तथा पेट में गैस गठन को भी रोकता है।

मूत्रीय विकार– अनेक नवीन शोधों व अध्ययनों से यह स्पष्ट व प्रमाणित किया जा चुका है कि कुरकूमिन का प्रयोग मूत्रीय विकारों के उपचार में किया जाता है। विभिन्न मूत्रीय संक्रमणों में टरमरिक राइजोम का प्रयोग किया जाता है। कुरकूमिन तथा कुरकूमिनॉइड्स का प्रयोग किडनी की पथरी के उपचार में भी किया जाता है।

लिवर टॉक्सिटी से बचाव में मदद कर सकते हैं– लिवर से विषाक्त तत्व निकालने और लिवर को डिटॉक्सीफाई करने में हल्दी सहायक हो सकती है। शोध के अनुसार, हल्दी के डिटॉक्सिफिकेशन और एंटीऑक्सीडेंट गुण मरकरी युक्त खाद्य पदार्थों के सेवन सामान्यतौर पर सी फूड के सेवन से होने वाली लिवर टॉक्सिटी से बचाव में मदद कर सकते हैं।

मधुमेह के उपचार में– कच्ची हल्दी में इन्सुलिन के स्तर को संतुलित करने का गुण होता है। अतः यह मधुमेह के रोगी के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। इंसुलिन के अलावा यह ग्लूकोज के स्तर को भी नियंत्रित करता है।

श्वसन सम्बन्धी रोगों के उपचार में– हल्दी को कफहारा, औषधि माना जाता है। हल्दी के ताजे राइजोम को कुकर खांसी) व्हूपिंग कफ (के उपचार में प्रयोग किया जाता है। इसमें उपस्थित वोलाटाइल ऑयल ब्रांकियल अस्थमा के उपचार में भी अत्यन्त उपयोगी होते हैं।

इसके साथ ही इसमें एंटी कैंसर गुण भी मौजूद होता है, जो प्रोस्ट्रेट, स्तन, और लंग्स कैंसर के जोखिम से बचाव में मदद कर सकता है। ध्यान रहे, अगर किसी को कैंसर है तो उस व्यक्ति के लिए डॉक्टरी इलाज ही पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। हल्दी के गुण से सूजन की समस्या के लिए भी हल्दी लाभकारी हो सकती है। मनुष्यों पर किए गए शोध में हल्दी का उपयोग सुरक्षित पाया गया। इसके साथ ही करक्यूमिन में एंटीइन्फ्लेमेटरी गुण की भी पुष्टि हुई, जो कि सूजन की समस्या से बचाव करने में सहायक

हो सकता है। सूजन कई बीमारियों जैसे– अर्थराइटिस, अस्थमा, कैंसर और अल्जाइमर (भूलने की बीमारी) का कारण बन सकता है। ऐसे में हल्दी एंटी इन्फ्लेमेटरी एजेंट की तरह काम कर सूजन की परेशानी को कम करने में सहायक हो सकती है।

हल्दी में एंटीऑक्सीडेंट गुण भी पाया जाता है, जो शरीर को फ्री रेडिकल्स से मुक्त रखने और आयरन के प्रभाव को संतुलित करने में मदद कर सकता है। हल्दी पाउडर के साथ–साथ इसके तेल में भी एंटीऑक्सीडेंट गुण पाए जाते हैं। वहीं, चूहों पर की गई एक स्टडी के अनुसार, हल्दी डायबिटीज के कारण होने वाले ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस को रोकने में सक्षम है। एक अन्य अध्ययन में दावा किया गया है कि करक्यूमिन में पाया जाने वाला एंटीऑक्सीडेंट गुण मनुष्यों की स्मरण शक्ति को बढ़ा सकता है।

हल्दी का उपयोग हृदय को स्वस्थ रखने में भी सहायक हो सकता है। हल्दी का सबसे महत्वपूर्ण घटक करक्यूमिन में कार्डियो प्रोटेक्टिव गुण मौजूद होते हैं, जिस कारण इसके उपयोग से हृदय रोग के जोखिम से बचाव हो सकता है। यह बात जानवरों और मनुष्यों पर किए गए कई अध्ययनों में सामने आई है। इसके साथ ही एक स्टडी में यह भी पाया गया है कि बाईपास सर्जरी (हृदय से जुड़ा ऑपरेशन) के मरीजों में करक्यूमिन के सेवन से दिल के दौरे का खतरा कम हो सकता है। ऐसे में हल्दी का सेवन हृदय को स्वस्थ रखने में मदद कर सकता है।

पाचन के लिए हल्दी का उपयोग

पाचन संबंधी समस्या (जैसे – गैस और अपच) कभी भी और किसी को भी हो सकती है। ऐसे में हल्दी का उपयोग न सिर्फ गैस और पेट फूलने की परेशानी से राहत दिला सकता है, बल्कि इर्रिटेबल बॉवेल सिंड्रोम आंत संबंधी समस्या और पाचन संबंधी समस्याओं से भी राहत दिलाने में सहायक हो सकता है। इतना ही नहीं करक्यूमिन में मौजूद एंटी–इन्फ्लेमेटरी और एंटीऑक्सीडेंट गुण अल्सर के जोखिम को भी कम करने में मदद कर सकते हैं। अल्जाइमर, जो कि एक मस्तिष्क संबंधी समस्या है, जिसमें व्यक्ति धीरे–धीरे अपनी याददाश्त खोने लगता है। इसके कारण अभी भी अज्ञात हैं, लेकिन बढ़ती उम्र इस बीमारी का एक जोखिम कारक हो सकता है। ऐसे में अल्जाइमर के जोखिम को कम करने के लिए हल्दी सहायक हो सकती है। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित एक शोध के अनुसार, अल्जाइमर मरीजों में हल्दी का उपयोग उनकी जीवनशैली में सुधार लाने में सहायक पाया गया। करक्यूमिन का एंटीऑक्सीडेंट और

हल्दी का पोषण मान प्रति 100 ग्राम

पौष्टिक तत्व	प्रति 100 ग्राम
एनर्जी	312 किलोकैलोरी
प्रोटीन	9.68 ग्राम
टोटल लिपिड (फैट)	3.25 ग्राम
ऐश	7.08 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	67.14
फाइबल, टोटल डायटरी	22.7 ग्राम
कैल्शियम	168 मिलीग्राम
आयरन	55 मिलीग्राम
पोटैशियम	2080 मिलीग्राम

हल्दी सब्जी का पोषण मान प्रति 100 ग्राम

पौष्टिक तत्व	प्रति 100 ग्राम
एनर्जी	319 किलोकैलोरी
प्रोटीन	6.99 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	37 ग्राम
फैट	16.6 ग्राम
फाइबर	2.80 ग्राम

हल्दी अचार का पोषण मान प्रति 100 ग्राम

पौष्टिक तत्व	प्रति 100 ग्राम
एनर्जी	91 किलोकैलोरी
प्रोटीन	2.27 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	18 ग्राम
फैट	1.43 ग्राम
फाइबर	1.5 ग्राम

हल्दी सूप का पोषण मान प्रति 100 ग्राम

पौष्टिक तत्व	प्रति 100 ग्राम
एनर्जी	159 किलोकैलोरी
प्रोटीन	3.19 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	32 ग्राम
फैट	2.4 ग्राम
फाइबर	1.40 ग्राम

नवम्बर माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में
डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) धान का खूँट सड़ाने के लिए 40 किग्रा यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने के बाद ही गेहूँ की बुवाई करें।

(2) गेहूँ की संस्तुत प्रजाति जैसे डी.वी.डब्ल्यू. 187, 17, एच.डी. 2967, 2733, एन.डब्ल्यू.5054, पी.वी.डब्ल्यू. 502, 550 आदि के प्रमाणित बीज की बुवाई 18–22 सेमी की दूरी पर करें।

(3) सरसों बुवाई के 14–20 दिन के अन्दर विरलीकरण करें।

(4) अलसी की संस्तुत प्रजातियों जैसे नीलम, लक्ष्मी, गरिमा, श्वेता, शुभ्रा, गौरव आदि के प्रमाणित बीज की बुवाई पन्द्रह नवम्बर से पहले अवश्य कर दें।

सब्जी एवं उद्यान में
डॉ. एस. के. वर्मा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष

(1) पुराने बाग में खाद का प्रयोग अवश्य कर लें। आम के पेड़ में इस समय पुष्प कलिका का सृजन होता है, अतः सिंचाई न करें। बेर, बेल, आँवला, पपीता एवं अमरूद में 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

(2) पिछेती पातगोभी तथा गाँठगोभी जिसकी पौध अक्टूबर मार्च में डाली गयी है, एक माह की होने पर रोपाई कर दें।

(3) टमाटर की किस्म मनीमेकर की पौध डालें।

(4) पालक की किस्म आलग्रीन और पूसा ज्योति की बुवाई करें।

(5) मेथी की पूसा अर्ली बंचिंग तथा कोयम्बटूर नं. 1 की बुवाई करें।

फसल सुरक्षा
डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) गेहूँ की बुवाई से पूर्व संस्तुत रसायन जैसे थीरम 2.0 ग्राम, 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से बीज का शोधन अवश्य करें। जहाँ अनावृत्त कण्डुआ की समस्या हो, वहाँ कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा की दर से प्रयोग करें।

(2) गेहूँ के असिंचित क्षेत्रों में भूमिगत कीट जैसे दीमक, गुजिया के नियंत्रण के लिए खेत की अन्तिम जुताई पर 14 किग्रा फोरेट–10जी का प्रयोग करना चाहिए।

(3) सरसों की आरा मक्खी, सफेद गेरूई एवं झुलसा के नियंत्रण के लिए इण्डोसल्फान 35 ई.सी. 1.25 लीटर अथवा मैंकोजेब 2 किग्रा प्रति हेक्टेयर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(4) दलहनी फसलों की बुवाई से पूर्व संस्तुत रसायन जैसे थीरम 2.5 ग्राम या जिंक मैंगनीज कार्बामेन्ट 2 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित कर बुवाई करें।

(5) पपीता में विषाणु रोग (पत्ती सिकुड़न) की रोकथाम हेतु इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(6) बीजू आलू को माँहू से बचाव हेतु फोरेट 10 जी 10 किग्रा/हेक्टेयर मिट्टी चढ़ाते समय अवश्य प्रयोग करें।

(7) सब्जी बीज शोधन 6 प्रतिशत पारायुक्त रसायन 250 ग्राम को 1.25 लीटर पानी में घोलकर 5 मिनट तक करें।

(8) आम के गुच्छा रोग की रोकथाम हेतु एन.ए. 200 पीपीएम अर्थात 200 मिग्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

पशुपालन
डॉ. सुरेन्द्र सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक

(1) दुधारू पशुओं तथ नवजात बछड़ों को सर्दी से बचाव हेतु खिड़कियों तथा दरवाजों पर टाट या बोरे का परदा लगा दें।

(2) नवजात पड़िया/बछिया/बछवा को प्रथम (खींस) प्रारम्भ के तीन दिन तक अवश्य दें।

(3) दुधारू पशुओं से अधिक दूध उत्पादन प्राप्त करने हेतु उन्हें पौष्टिक आहार देना चाहिए। इसके लिए सूखा चारा के साथ–साथ हरा चारा अवश्य दें। साथ ही गाय को 3 लीटर दूध उत्पादन पर तथा भैंस को 2–2.5 लीटर दूध उत्पादन पर 1 किग्रा संतुलित राशन अवश्य देना चाहिए।

(4) बकरी पालने वाले कृषक भाई बकरियों तथा उनके बच्चों को सर्दी से बचाने हेतु उनके पीठ पर बोरा बाँध दें जिससे ठण्ड से बचाव हो सके।

(5) जो किसान भाई कुक्कुट पालन का कार्य कर रहे हों

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार, विषय वस्तु विशेषज्ञ, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

उन्हें चाहिए कि वे सर्दी से बचाव हेतु खिड़कियों दरवाजों आदि पर टाट या बोरे के पर्दे लगा दें।

(6) एक दिन के चूज़ों में रानी खेत एफ–1 छः सप्ताह पर रानी खेत एफ–2 तथा 8 सप्ताह की उम्र में चेचक से बचाव हेतु टीकाकरण करायें।

(7) भूमिहीन, लघु व सीमान्त कृषकों के लिए बकरी पालन एक अच्छा एवं लाभकारी रोजगार है इसके लिए बकरियों की प्रमुख नस्लें जैसे जमुनापारी, बरबरी, ब्लैक बंगाल, कच्छी, मालवारी नस्लें प्रमुख हैं इनसे किसान भाई अच्छा उत्पादन प्राप्त कर आर्थिक लाभ उठा सकते हैं।

(8) मांस उत्पादन करने वाली मुर्गियों के उचित विकास हेतु उत्तम एवं पूर्णरूप संतुलित आहार का प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : गेहूँ में बथुवा की समस्या बहुत अधिक हो जाती है, इसकी रोकथाम कैसे करें?

(श्री अंकित सिंह तिरहत, जनपद सुल्तानपुर अयोध्या)

उत्तर : गेहूँ की फसल जब 30–35 दिन की हो जाए तब उसमें 2, 4 डी सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत की 625 ग्राम मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें। इससे अच्छे परिणाम के लिए 2,4 डी 200 ग्राम सक्रिय पदार्थ के साथ आइसोप्रोट्यूरान 500 ग्राम (सक्रिय पदार्थ) प्रति हेक्टेयर 600–700 लीटर पानी में घोलकर उक्त अवस्था पर छिड़काव करने से अधिकांश खरपतवार समूल नष्ट हो जाते हैं।

प्रश्न : आँवले में फल लगने के बाद काला दाग पड़ जाता है जिससे फल गिर जाते हैं, रोकथाम कैसे करें?

(श्री अनुज कुमार सिंह, मवई, जनपद अयोध्या)

उत्तर : आँवले के फल में कालापन भूमि में बोरान की कमी के कारण होता है। इसके उपचार हेतु सितम्बर माह से 15 दिन के अन्तर से 0.6 प्रतिशत बोरेक्स 6 ग्राम प्रति लीटर की दर से तीन बार छिड़काव करें।

प्रश्न : गाय और भैंस समय से गर्म नहीं होती क्या कारण है?

(श्री तौफिक, गौरीगंज, अमेठी)

उत्तर : गाय अथवा भैंस का ऋतुमय में न आने के तमाम कारण होते हैं। इसमें मुख्य रूप से पशु का कमजोर होना, आहार में लवणों की कमी, परजीवियों का प्रकोप, अण्डाशय, पीयूष ग्रन्थि (पिट्यूटरी ग्लैण्ड) तथा गर्भाशय आदि के विकारों के फलस्वरूप ऋतुचक्र रूक जाता है। इनमें बहुत से ऐसे कारण हैं जिन पर ध्यान देने से लगभग 60–65 प्रतिशत पशुओं में इस समस्या से बचा जा सकता है।

प्रश्न : अच्छे किस्म का बीज किस संस्थान से प्राप्त करें?

(श्री बाबादीन निवाद, खंडासा जनपद अयोध्या)

उत्तर : उन्नत किस्म का बीज प्रमुखतः धान, अरहर, चना, मटर, तोरिया, सरसों तथा गेहूँ का आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या के बीज तकनीकी विभाग से आप प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर है, वहाँ से भी उन्नत किस्म का बीज प्राप्त किया जा सकता है। वैसे प्रत्येक जनपद के कृषि विभाग द्वारा भी उन्नत किस्म का बीज उपलब्ध कराया जाता है।

प्रश्न : अण्डा उत्पादन हेतु मुर्गियों की कौन सी नस्ल अच्छी पायी जाती है?

(श्री मो0 सरफराज, बल्दीराय सुल्तानपुर,)

उत्तर : अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न, रोड आइसलैण्ड रेड नस्लें अच्छी पायी जाती हैं। परन्तु व्यवसायिक अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न नस्ल सबसे अच्छी पायी गयी है जो एक वर्ष में लगभग 280 से 320 अण्डे का उत्पादन करती है परन्तु अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए इसका वैज्ञानिक तरीके से प्रबन्धन करना आवश्यक है। अधिक जानकारी हेतु कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या से सम्पर्क कर सकते हैं।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित